वर्ष : 3, अंक : 12

अक्टूबर-दिसम्बर 2019

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

"हिंदी हैं हम"

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

निजभाषोन्नतौ राष्ट्रोन्नतिः

विशेष :

'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान'

'डोगरी भाषा और उसका साहित्य'

वर्ष : 3, अंक : 12

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

मूल्य : 30 रुपये

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

सम्पादक
सुधाकर बाबू पाठक

प्रबन्ध सम्पादक : **सविता चड्ढा**
सह सम्पादक : **विजय कुमार शर्मा**
: **सागर समीप**
उप सम्पादक : **राजकुमार श्रेष्ठ**
: **डॉ. बीना राघव**
प्रवक्ता : **बृजेश द्विवेदी**
कानूनी सलाहकार : **अमरनाथ गिरि**
वित्तीय सलाहकार : **राम सिंह मेहता**

सम्पादकीय सहयोग
सुरेखा शर्मा, सरोज शर्मा, सुषमा भण्डारी
नीतू पांचाल, शकुन्तला मित्तल, सीमा सिंह
भूपिंद्र सेठी, डॉ. विदुषी शर्मा

कार्यालय :
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी
3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034
ई-मेल : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com
वेबसाइट : www.hindustanibhashaakadami.com
सम्पर्क सूत्र : 09873556781, 09968097816

- पत्रिका में प्रकाशित लेखों में लेखकों के अपने विचार हैं । प्रकाशक का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है ।
- सभी विवादों का निपटारा दिल्ली/नई दिल्ली की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में ही किया जाएगा ।
- सम्पादन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक और अव्यावसायिक है ।

प्रकाशक, सम्पादक व मुद्रक सुधाकर बाबू पाठक द्वारा स्वामी हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी ट्रस्ट, 3675, राजा पार्क, शकूर बस्ती, दिल्ली-110034 के लिए प्रकाशित और सन्नी प्रिन्टर्स, बी-234, नारायणा इन्डस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028 से मुद्रित ।

विषय सूची

संपादकीय : भाषा के अंकुरों को बचाने का प्रयास... 04
विशेष रिपोर्ट : 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह' 05
साक्षात्कार : दिनेश तिवारी, उपाध्यक्ष, प्रेस क्लब ऑफ इंडिया 07
साक्षात्कार : प्रो. गिरीश्वर मिश्र, पू.कुलपति, महात्मा गाँधी अं.हि.वि.वि.,वर्धा 10
साक्षात्कार : डॉ. अनामिका, साहित्यकार 14
डोगरी लोक गीतों की विधा-भाख -डॉ. आदर्श 16
डोगरी भाषा-कुछ महत्वपूर्ण तथ्य -प्रो. शरद नारायण खरे 19
हिंगलिश और भविष्य की हिन्दी:..... -किशोर दिवसे 20
चिंदी-चिंदी होती हिन्दी -डॉ. मोतीलाल गुप्ता 'आदित्य' 22
शिक्षा को प्रभावी बनाने के लिए राष्ट्र को भाषा की दरकार है! -गिरीश्वर मिश्र 24
तटबंधों को तोड़ती हिन्दी -अरविन्द जयतिलक 26
डोगरी लोक गीतों में पर्यावरण चेतना -यशपाल निर्मल 28
विज्ञापन, सोशल मीडिया और हिन्दी-आभा पालीवाल 30
जिन भारतीयों को पूरे देश से लगाव है..... -शंकर शरण 32
हिन्दी को बोलियों से मत लड़ाइए -डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय 33
राष्ट्रभाषा-समस्या कब हल होगी -गौरी शंकर वैश्य 'विनम्र' 36
डोगरी गीत -कुसुम शर्मा 'अंतरा' 38
भूमंडलीकरण, बाजारवाद और हिन्दी अस्मिता -डॉ. लता अग्रवाल 39
अक्षुण्ण रहेगी हिन्दी की अस्मिता -डॉ. एस. आनन्द 43
हिन्दी का सफर कहाँ तक ? -श्रीमती आशा शैली 44
अहो! हिन्दी दुर्दशा देखी न जाए -सुदर्शन वशिष्ठ 46
आगामी आयोजन : भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह एवं काव्योत्सव 49

सम्पादकीय

भाषा के अंकुरों को बचाने का गंभीर प्रयास है 'मेधावी छात्र एवं भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह'

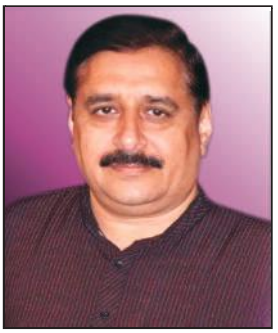

सुधाकर पाठक
सम्पादक एवं अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्द्धन और प्रचार-प्रसार को समर्पित स्ववित्त पोषित संस्थान है जो अपने सीमित संसाधनों से लगातार भाषा के क्षेत्र में पूरी निष्ठा, कर्त्तव्य बोध, लगन और सक्रियता से जमीनी स्तर पर कार्य कर रही है । अकादमी के लिए हर्ष और गर्व का विषय है कि इसके कार्यों को विभिन्न सरकारी, गैर-सरकारी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक महत्व के संस्थानों द्वारा रेखांकित भी किया जा रहा है और सम्मानित भी किया जा रहा है । हिन्दी अकादमी, दिल्ली सरकार का इस वर्ष का भाषाओं के लिए दिया गया 'विशिष्ट योगदान सम्मान' इसी श्रृंखला की कड़ी है ।

अकादमी का सूक्त वाक्य है कि 'भाषा को बचाने के लिए पत्तों पर पानी डालने से नहीं अपितु भाषा की जड़ों को सींचना आवश्यक है ।' हमारे देश के विद्यालय वो खेत हैं जिनमें हमारी भाषाओं की जड़ें हैं, इन्हीं से देश के भविष्य की भाषाएँ अंकुरित होती हैं । शिक्षक भाषा और विद्यार्थिओं के बीच एक सेतु का कार्य करते हैं । इन्हीं अंकुरों को पल्लवित एवं पुष्पित करने की इस कोशिश का नाम ही 'मेधावी छात्र सम्मान समारोह' एवं 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' है ।

'मेधावी छात्र सम्मान समारोह', हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी का वार्षिक सम्मान आयोजन है जहाँ ऐसे मेधावी छात्रों को सम्मानित किया जाता है जिन्होंने 10वीं कक्षा के बोर्ड परीक्षा में भारतीय भाषाओं के विषय में 90 प्रतिशत या इससे अधिक अंक प्राप्त किए हों। अकादमी द्वारा लगातार तीसरी बार यह आयोजन दिल्ली प्रदेश में हो रहा है और इस तरह के आयोजन से जो उपलब्धि सामने आ रही है वो वास्तव में चौकाने वाली हैं । आपके साथ यह बात साझा करते हुए हमें बहुत खुशी हो रही है कि प्रथम आयोजन में 240 छात्रों, गत वर्ष 1725 छात्रों को सम्मानित किया गया था, वहीं इस वर्ष कुल 3500 मेधावी छात्रों को एक ही मंच पर सम्मानित किया जा रहा है । इनमें से 50 ऐसे छात्र हैं जिन्होंने शत प्रतिशत अंक प्राप्त किए हैं। इसी प्रकार गुरुग्राम (हरियाणा) और गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश) में भी सम्मानित होने वाले छात्रों की संख्या में कई गुणा वृद्धि हुई है । ज्ञात हो कि विगत वर्षों के आयोजनों में केवल हिन्दी विषय के मेधावी छात्रों को ही सम्मानित किया जाता रहा है किन्तु इस वर्ष से दिल्ली प्रदेश के विद्यालयों में संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित जितनी भारतीय भाषाओं में अध्यापन किया जाता है उन्हें भी इस योजना में सम्मिलित किया गया है। इस वर्ष हिन्दी, संस्कृत, पंजाबी, बंगाली, उर्दू और गुजराती सहित 6 भाषाओं के मेधावी छात्रों को सम्मानित किया जा रहा है।

आज जब छात्र विदेशी भाषाओं की चका-चौंध में माध्यमिक स्तर पर ही हिन्दी को छोड़कर विकल्प के रूप में फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश लेना चाहते हैं तो वो शिक्षक ही हैं जो उन्हें अपनी भाषा के महत्त्व को समझाते हैं, उनमें अपनी भाषा से सम्मान करना सिखाते हैं और बताते हैं कि इस स्तर पर इन भाषाओं को पढ़ने का कोई औचित्य नहीं है । उनके इस प्रयास से भाषा का भला तो होता ही है साथ ही उनके रोजगार की रक्षा भी होती है । ज्ञात हो कि दिल्ली के निजी विद्यालयों में आठवीं कक्षा के बाद हिन्दी और संस्कृत को विदेशी भाषाओं के समकक्ष वैकल्पिक भाषा के रूप में रखा जा रहा है जबकि अंग्रेजी मुख्य भाषा के रूप में रहती है । भाषा शिक्षकों के इन प्रयासों को रेखांकित करते हुए हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी भारतीय भाषाओं के उन शिक्षकों के लिए प्रत्येक वर्ष 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' का आयोजन करती है जिनके छात्रों ने भाषा विषय में 90% या इससे अधिक अंक प्राप्त किये हों । अकादमी की ओर से इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र, संस्कृति मंत्रालय, हिन्दी अकादमी, दिल्ली सरकार एवं दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी आदि संस्थानों के साथ मिलकर अब तक लगभग 1200 भाषा शिक्षकों को सम्मानित किया गया है ।

हम अपने प्रयासों में कितने सफल हो पा रहे हैं यह तो आने वाला समय ही बताएगा किन्तु हमें इस बात का संतोष है कि मंच-माला-माइक-सम्मान के इस वर्तमान दौर में जब हिन्दी और अन्य भाषाओं के नाम पर होने वाले बड़े-बड़े आयोजनों के माध्यम से जो आडम्बर हो रहे हों, हिन्दी के लिए सम्मान लेने-देने का खुला खेल चल रहा हो, शासन-प्रशासन भाषाओं को लेकर उदासीन हो, हिन्दी सेवा के नाम पर मठाधीश अपना उल्लू सीधा कर रहे हों तब हमारे इन बाल प्रयासों से जो सुखद परिणाम आ रहे हैं वह हमारे लिए उत्साहवर्धक हैं । ईश्वर हमें शक्ति दे कि हम पथ भ्रमित न हों और निरंतर अपने सद्प्रयासों में अग्रसर रहें । शुभम....

विशेष रिपोर्ट

'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह' एवं 'सर्व भाषा काव्योत्सव' सम्पन्न

दिल्ली प्रदेश के 115 विद्यालयों के 300 भाषा शिक्षकों (हिन्दी, संस्कृत, पंजाबी, उर्दू, बंगाली, गुजराती आदि) को किया गया सम्मानित ।

हिन्दी अकादमी, दिल्ली सरकार एवं हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में बुधवार, 25 दिसम्बर 2019 को गाँधी शांति प्रतिष्ठान, दीन दयाल उपाध्याय मार्ग, दिल्ली में 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान'एवं सर्व भाषा काव्योत्सव का आयोजन सम्पन्न हुआ । 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा भाषा शिक्षकों को दिया जाने वाला वार्षिक सम्मान है। दीप प्रज्जवलन एवं सामूहिक राष्ट्रगान के बाद कार्यक्रम का विधिवत शुभारंभ हुआ। यह आयोजन दो सत्रों में किया गया । उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में सुविख्यात साहित्यकार आ0 चित्रा मुद्गल जी तथा अन्य मंचासीन अतिथियों में विशिष्ट अतिथि वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के अध्यक्ष एवं केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्ली के निदेशक प्रो. अवनीश कुमार, शिक्षाविद, पत्रकार एवं जेल सुधारक डॉ. वर्तिका नन्दा, संस्कृत के विद्वान और हिन्दी अकादमी के सचिव डॉ. जीतराम भट्ट एवं हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक उपस्थित थे ।

समारोह के द्वितीय सत्र के मुख्य अतिथि के रूप में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग परिषद के मानद निदेशक श्री नारायण कुमार, डॉ. दीपक पाण्डेय, डॉ. नूतन पाण्डेय, सुश्री नीना सहर, सुश्री कीर्ति दीक्षित, कर्नल प्रवीण त्रिपाठी मंचासीन थे ।

भारतीय भाषाओं की आम समस्याओं पर बोलते हुए हिन्दी अकादमी के सचिव डॉ. जीतराम भट्ट ने कहा कि सभी भारतीय भाषाओं की समस्याएँ एक जैसी हैं और इसका कारण है लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीति । लॉर्ड मैकाले ने भारतीय समुदाय में अंग्रेजी के प्रति ऐसी मानसिकता को स्थापित कर दिया है कि लोग आज तक उस माहौल से बाहर नहीं निकल पा रहें हैं और इसका नुकसान भाषा शिक्षकों को उठाना पड़ता है । भाषा शिक्षकों को चाहे वे कोई भी भारतीय भाषा पढ़ाते हों, आए दिन उन्हें तरह-तरह की समस्याओं से जूझना पड़ता है उनकी गतिविधियों का विरोध किया जाता है और उन्हें दोयम दर्जे के नजरिये से देखा जाता है । ऐसी कई समस्याएँ हैं जिन्हें अन्य विषय के शिक्षकों को भुगतना नहीं पड़ता । निजी विद्यालयों में भाषा शिक्षकों की वर्तमान स्थिति पर बोलते हुए उन्होंने अपने कुछ व्यक्तिगत अनुभव भी साझा किए । उन्होंने बताया कि जब वे दिल्ली के किसी निजी विद्यालय में हिन्दी एवं संस्कृत विषय के शिक्षक रहें तो वहाँ भाषा का बड़ा विरोध होता था । वे उपस्थिती रजिस्टर पर हिन्दी में हस्ताक्षर करते थे; प्रार्थना सभाओं में हिन्दी और संस्कृत के पक्ष में वक्तव्य प्रस्तुत करते थे किन्तु अपनी इन्हीं क्रियाकलापों के चलते उन्हें एक दिन नौकरी से हाथ धोना पड़ा । हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी का आभार प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि अकादमी भाषा के क्षेत्र में सार्थक कार्य कर रही है । भाषा शिक्षकों का सम्मान राष्ट्र का सम्मान है । देश की भाषा, साहित्य और संस्कृति के संरक्षण में भाषा शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है । हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष, श्री सुधाकर पाठक ने अपने उद्बोधन में कहा कि आज जिस तरह का वातावरण शिक्षण संस्थानों में चल रहा है उससे भाषा शिक्षकों की नौकरी ही खतरे में है । माध्यमिक स्तर के बाद हिन्दी को विदेशी भाषाओं के समकक्ष वैकल्पिक भाषा की श्रेणी में रख दिया गया है । बच्चों को फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश आदि भाषाओं के कार्यशालाओं के माध्यम से हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं से विमुख एवं विस्थापित किया जा रहा है । जब उच्चस्तर पर भाषा शिक्षक नहीं होंगे, पढ़ने वाले बच्चे नहीं होंगे तो आज जो साहित्य लिखा जा रहा है उसके पाठक कहाँ से लाएँगे ? जब पाठक ही नहीं होंगे तो हमारे साहित्य को कौन पढ़ेगा ? कौन इसका मूल्यांकन करेगा ? उन्होंने उपस्थित शिक्षकों से अपील की कि यह जो सम्मान आपको दिया जा रहा है इसे केवल उत्सव के रूप में न लें बल्कि यह मानकर चलें कि आपके ऊपर और भी जिम्मेदारी बढ़ गयी है । एक शिक्षित वर्ग होने के नाते आपको अपने विद्यालय में भाषा के

शेष पृष्ठ संख्या 13 पर

'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह' एवं सर्व भाषा काव्योत्सव के कुछ चित्र

साक्षात्कार : दिनेश तिवारी, उपाध्यक्ष, प्रेस क्लब ऑफ इंडिया

पत्रकारिता में जिस तरह की भाषा का प्रयोग हो रहा है वह चिन्ताजनक है।

हिन्दी सेवी तथा भारतीय भाषाओं के संवर्द्धन के प्रबल पक्षधर श्री दिनेश तिवारी दैनिक हिंदुस्तान में सह संपादक है, हिंदुस्तान समाचार पत्र में जो नई दिशाएँ नामक पृष्ठ है वह आपकी ही देन है। आप काफी लंबे समय से मीडिया के क्षेत्र में कार्यरत है और उसी के साथ-साथ आप मीडिया कर्मियों के उत्थान के लिए भी कार्य करते रहे है जिसके फलस्वरूप मौजूदा समय में आप प्रेस क्लब ऑफ इंडिया के उपाध्यक्ष है। आप प्रेस क्लब ऑफ इंडिया की द्विभाषी पत्रिका 'द स्क्राइब वर्ल्ड' के संपादक भी हैं । आप ने यूपीएससी की तैयारी करते समय हिन्दी में भूगोल के प्रश्न बैंक का निर्माण किया क्योंकि उस समय तक हिन्दी में बहुत ही कम प्रश्न बैंक उपलब्ध थे। इसी के साथ आप कई वर्षों से दिल्ली विश्वविद्यालय में मीडिया के प्राध्यापक के तौर पर कार्यरत हैं।

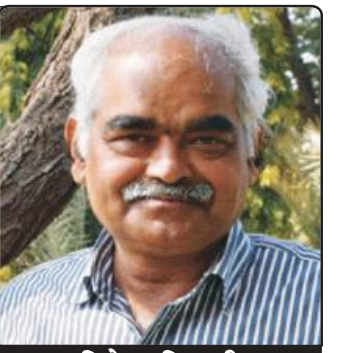

दिनेश तिवारी

प्रश्न : मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाता है । आप काफी लंबे समय से इस क्षेत्र में कार्यरत है, तो आप हिन्दी पत्रकारिता में हिन्दी को किस स्तर पर देखते हैं?

उत्तर : हिन्दी के साथ देश में आज भी जो व्यवहार हो रहा है वह एक तरीके से सौतेला व्यवहार है। हमारी देश की एक अच्छी खासी भाषा है। लोग इसको समझते हैं, इसको जानते हैं तो क्यों ना इसके साथ अच्छा व्यवहार किया जाए, इसका प्रयोग किया जाए। दरअसल दोनों ही वर्गो ने (सरकार और समाज) भाषा के विषय में कोताही बरती है। दोनों की ही लापरवाही के कारण आज हिन्दी को उसकी सही जगह नहीं मिल पाई है। आज सरकारों को चाहिए कि वह हिन्दी भाषा पर सही तरीके से काम करें व समाज को भी हिन्दी के प्रति जागरूक होना होगा। आज पत्रकारिता में जो भाषाओं का प्रयोग हो रहा है वह थोड़ा चिंताजनक है लेकिन फिर भी पत्रकारिता में अच्छी हिन्दी का प्रयोग किया जा रहा है चाहे रेडियो हो,विजुअल मीडिया हो या प्रिंट मीडिया हो। भाषा पर कोई दिक्कत नहीं है लेकिन अब हम लोगों को इन भाषाओं को और अच्छा बनाने के लिए कार्य करने होंगे और खासतौर से मीडिया को क्योंकि मीडिया पर समाज की काफी बड़ी जिम्मेदारी होती है। जब वह देश को जागरूक मतदाता तैयार करके दे सकता है जो कि एक मजबूत सरकार बनाता है तो हिन्दी भाषा के लिए कार्य करने का जिम्मा भी मीडिया पर आता है। आज मीडिया, सरकार और जनता को यह समझना होगा कि सभी की भागीदारी से ही हिन्दी का विकास होगा नहीं तो हिन्दी आज जहाँ खड़ी है वो वहाँ ही खड़ी रह जाएगी।

प्रश्न : वर्तमान में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी के परिदृश्य को आप किस प्रकार से देखते हैं? क्या आप मौजूदा समय में हिन्दी की स्थिति से संतुष्ट हैं?

उत्तर : हां, मैं संतुष्ट हूँ और मैं इसलिए संतुष्ट हूँ क्योंकि सन साठ में हिन्दी जहाँ खड़ी थी उससे आगे बड़ी सन सत्तर में,सत्तर में जहाँ खड़ी थी उससे आगे बड़ी सन अस्सी में। आज 2019 में देश और दुनिया में हिन्दी जानने वाले, हिन्दी समझने वाले और हिन्दी बोलने वाले बड़े हैं। यह दुर्भाग्य हमारा है, हम लोग हिन्दी को उसके सही स्वरूप में नहीं अपनाते। हमें लगता है कि यदि हम अंग्रेजी पढ़ लेंगे तो हम बहुत बड़े ज्ञानी बन जाएंगे, बहुत बड़े विद्वान बन जाएंगे लेकिन इससे बात बनती नहीं है। आज दुनिया के करीब 53 देशों में 1270 मिलियन लोग हिन्दी जानते हैं और विश्व की 18% आबादी हिन्दी जानती है। आज पूरे विश्व में हिन्दी तीसरे नंबर पर बोले जाने वाली भाषा है जो कि हमारे लिए गौरव की बात है। दुनिया के 150 से अधिक देशों में हिन्दी की पढ़ाई होती है और इसका प्रशिक्षण कार्य कराया जाता है। जर्मनी के 25 विश्वविद्यालय है, अमेरिका के 45 विश्वविद्यालय है जहाँ इसके अध्ययन की व्यवस्था है। जब दुनिया में हिन्दी के लिए इतना कार्य हो रहा है तो भारत में क्यों नहीं होता। हिन्दी को लोगों ने राजनीति का विषय बना कर रख दिया है जिससे की बात बनती नहीं है। कर्नाटक, केरल, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और लक्ष्यद्वीप में लोग चाहे तो हिन्दी को और आगे बढ़ा सकते हैं। मैं बार-बार कहता हूँ कि भारत का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है, गाँव नहीं है जहाँ पर लोग हिन्दी ना जानते हो। दुनिया का कोई ऐसा देश नहीं है जहाँ हिन्दी भाषी ना हो, फिर आप कैसे कह सकते है कि हिन्दी का जो स्थान है वह ठीक नहीं है। मैं तो संतुष्ट हूँ और इसलिए हूँ क्योंकि इस पर काम करने की जरूरत है। आने वाले समय में सरकारें, निष्ठावान लोग, ज्ञानी-ध्यानी लोग इसके प्रति जागरूक होंगे और हिन्दी के लिए कार्य करेंगे जो कि देश को सकारात्मक परिणाम देंगे।

प्रश्न : वर्तमान में विद्यालयों में प्राथमिक शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से दी जाती है और आठवीं कक्षा से हिन्दी को वैकल्पिक बनाकर अन्य विदेशी भाषाएं सिखाई जाती है तो आप हिन्दी के प्रति इस रवैया पर क्या कहना चाहेंगे ?

उत्तर : हमारे पास भाषा को लेकर त्रिभाषा फॉर्मूला है मेरे हिसाब से

हम लोगों को उसी फार्मूले को सही प्रकार से लागू करना चाहिए । यह देश बहुत बड़ा है । यह संस्कृतियों, बोलियों, भाषाओं, पहनावे जैसी तमाम विविधताओं से भरा हुआ है । देश में 640000 गाँव हैं, 670 जिले हैं यहाँ पर ''कोस कोस पर बदले पानी और चार कोस पर वानी" वाली कहावत पूर्ण रुप से लागू होती है । बच्चों का विकास मातृभाषा से ही संभव है और इसी के जरिए बच्चा जब आगे बढ़ता है तो उसकी प्रतिभा का विकास होता है । हमने अंग्रेजी पढ़ा-पढ़ा कर बच्चों को कुंद कर दिया है खासतौर से पूरे देश के बच्चों को । सिर्फ अंग्रेजी पढ़ाने से बात बनती तो बात ही क्या थी, अंग्रेजी पढ़ने से हम लोगों को संस्कार नहीं मिलते । हिन्दी हमे संस्कारित करती है, संस्कार देती है । संस्कार हमारे जीवन मूल्यों के आधार है और वही हमारे काम आते हैं । यदि आप संस्कार हीन हैं और आप किसी भी विश्वविद्यालय से स्नातक है तो काहे की पढ़ाई । शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य होता है अपना भला करना, समाज का भला करना, देश का भला करना, दुनिया का भला करना । सबसे पहले बच्चों को अपनी मातृभाषा पढ़ाई जानी चाहिए क्योंकि उसके बिना बच्चे अपनी जड़ों से नहीं जुड़ पाएंगे आगे चल कर उसे संपर्क भाषा के तौर पर हिन्दी पढ़ाई जानी चाहिए इसके बाद व्यक्ति कोई भी भाषा सीखे उससे हमें कोई परहेज नहीं है मैं इस साक्षात्कार के माध्यम से यह कहना चाहता हूँ कि आप अंग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाएं पढिए लेकिन उससे पहले अपनी मातृभाषा और हिन्दी को सीखिए क्योंकि उसके बिना आप की उन्नति संभव नहीं है । आज-कल हर कोई अंग्रेजी की तरफ भागा जा रहा है कि हमें अंग्रेजीदा होना है और इसकी एक ही वजह है कि हिन्दी को रोजगार से नहीं जोड़ा गया है। भाषा को रोजगार से जोड़ने की जरूरत है । अंग्रेजी भाषा के लोग रोजगार पाने में जल्दी कामयाब हो जाते हैं क्योंकि अंग्रेजी को रोजगार से जोड़ा गया है। जिस तरीके से सन 86 में तत्कालीन सरकार के प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी ने कहा था कि शिक्षा को रोजगार से जोड़ने की जरूरत है उसी तर्ज पर मैं कह रहा हूँ कि भाषा को रोजगार से जोड़ने की जरूरत है हम पढ़ लिख कर क्या करेंगे हमारा मुख्य उद्देश रोजगार पाना ही है लेकिन इसी के साथ हम लोगों को एक बात और ध्यान में रखनी होगी कि शिक्षा का मतलब रोजगार पाना हो लेकिन उसी के साथ शिक्षा के और भी कई उद्देश्य होते हैं जैसे एक ऐसा व्यक्ति बनाना जो समाज के प्रति समर्पित हो, देश के प्रति समर्पित हो। शंकराचार्य का एक बड़ा अच्छा कथन है कि 'सा विद्या या विमुक्तये' मतलब की शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो मुझे मुक्ति दिलाएं और मुक्ति अज्ञानता से आसक्ति से।

प्रश्न : हमारी नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का ड्राफ्ट आ गया है लेकिन दो दिन बाद ही दक्षिण राज्यों के दबाव में हिन्दी को अनिवार्य भाषा वाले खंड को हटा दिया गया है आप इसे किस रूप में देखते हैं ?

उत्तर : हम लोगों का कुल मिलाकर एक ही मकसद होना चाहिए हिन्दी का भला और हिन्दी के जरिए समाज का भला और समाज के जरिए देश का भला । सन 52 से लेकर अब तक यह सारी चीजें चलती आ रही है, राजनीति होती रही है भाषा को लेकर । पहले भी इस पर तमाम तरीके के फार्मूले बने हैं । वही बात महात्मा गांधी ने कही है, जवाहरलाल नेहरू ने कही है, सरदार पटेल ने कही है, सुभाष चंद्र बोस ने कही है । वह चीजें जो उन्होंने कही है वह आज भी मौजू है और सही भी है, यह काम तो केंद्र सरकार और राज्य सरकारों का है कि वह भाषा को लेकर सजग हो और सही प्रकार से नीतिए बनाएं जो भाषाओं की उन्नति करें । दक्षिण भारत में हिन्दी भाषी लोग जाकर हिन्दी के लिए काम क्यों नहीं करते और दक्षिण के लोगों को भी जिन्हें हिन्दी से परेशानी है वह पहले हिन्दी में आकर काम तो करें, हिन्दी को सही प्रकार से जाने तो सही । शिक्षा नीति ऐसी हो जिससे देश का भला हो, युवाओं का भला हो, समाज का भला हो परंतु हिन्दी को अनिवार्य नहीं करना चाहिए, देखिए यदि आप किसी को भोजन खिलाते हैं तो उसकी रुचि के अनुसार खिलाते हैं ना कि अपनी मर्जी उस पर थोपते हैं यही रवैया हम लोगों को भाषाओं पर भी अपनाना चाहिए । जो राज्य हिन्दी नहीं पढ़ते हैं उनके लोगों को समझाना चाहिए कि हिन्दी आपके लिए कितनी लाभकारी है,जब तक हम लोग उन लोगों को हिन्दी के प्रति जागरूक नहीं करेंगे तो इस तरीके के विरोध होते रहेंगे । हमें लोगों को हिन्दी की महत्वता समझानी होगी । जब तक लोगों के मन में खुद से हिन्दी के प्रति रुचि उत्पन्न नहीं होगी तब तक हिन्दी का इसी तरीके से विरोध होता रहेगा । आप उदाहरण के तौर पर मुझे ही देख लीजिए मैं हिन्दी का विद्यार्थी नहीं रहा हूँ लेकिन मेरे मन में हिन्दी फिल्म था, हिन्दी के लिए आदर था । मेरे मन में एक भाव था कि मैं हिन्दी क्षेत्र का हूँ तो मैं क्यों न हिन्दी के लिए कार्य करूं । जब मैं यूपीएससी की तैयारी कर रहा था तो मेरे मन में आया कि क्यों ना मैं सभी हिन्दी भाषी उम्मीदवारों के लिए भूगोल का एक क्वेश्चन बैंक तैयार करूं क्योंकि उस समय हिन्दी के कोई क्वेश्चन बैंक नहीं हुआ करते थे और मैंने वह कार्य किया भी, हिंदुस्तान समाचार पत्र में कार्य करते हुए मैंने नई पीढ़ी को नई दिशाएं जैसी नवीन चीज उपलब्ध करवाई तो लोगों के मन में हमें हिन्दी के लिए कार्य करने की इच्छा जगानी होगी ।

प्रश्न : भारत की भाषिक विविधता एक समस्या के रूप में देखी जाती है, कुछ लोग हिन्दी पर वर्चस्ववादी होने का आरोप भी लगाते हैं यह कहाँ तक सही है ?

उत्तर : किसी एक भाषा को तो आगे बढ़ना पड़ेगा, किसी को तो बड़ी बहन बनना होगा और वह बड़ी बहन हिन्दी है । हिन्दी अपने बड़ी बहन होने का फर्ज निभा रही है और बाकी तमाम भाषाएं और बोलियाँ इसकी छोटी बहनें हैं कोई मैथिली है, कोई अवधी है, कोई भोजपुरी है

और वहीं दूसरी तरफ तमिल, कन्नड़, मलयालम, तेलुगू भी इसकी छोटी बहनें हैं । आज सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा हिन्दी है । हिन्दी वर्चस्व की भाषा नहीं है, हिन्दी देश को जोड़ने वाली भाषा है और हमें इसी प्रकार से हिन्दी को देखना चाहिए । हिन्दी देश को एक साथ जोड़ती है। जम्मू-कश्मीर का व्यक्ति नीचे महाराष्ट्र के व्यक्ति से हिन्दी के माध्यम से ही जुड़ता है, गुजरात का व्यक्ति सिक्किम के व्यक्ति से हिन्दी के माध्यम से ही जुड़ता है तो इस तरह हिन्दी समग्र भारत को आपस में जोड़ती है । हिन्दी के पास एक बड़ी बहन की भूमिका है और वह इसे भली प्रकार से निभा रही है और उसे निभाना भी चाहिए और इसका फैलाव होना चाहिए ।

प्रश्न : क्या हमसे त्रिभाषा फार्मूला को सही ढंग से लागू करने में चूक हुई है? क्या इस समय इस फार्मूले का कोई औचित्य बचा है ?

उत्तर : बिल्कुल इसका औचित्य है, मैंने शुरू में ही आपसे कहा है कि यदि हम लोगों को अपनी भाषाओं का संरक्षण करना है तो हम लोगों को त्रिभाषा फार्मूला ही अपनाना होगा। त्रिभाषा फार्मूला के चलते ही हमारी भाषाओं की उन्नति हो सकती है क्योंकि इसी फार्मूले के तहत बच्चे अपनी मातृभाषा, हिन्दी और अंग्रेजी तीनों ही भाषाओं को पढ़ सकते हैं । यही वह फार्मूला है जो बच्चों को तीनों ही भाषाओं का ज्ञान देता है । यह विद्यालयों को बाध्य करता है कि वह इन तीनों भाषाओं को बच्चों को सिखाएं और जहाँ तक बात है इस फार्मूले को लागू करने की तो चूक केवल इच्छाशक्ति की है। राज्य सरकारों और केंद्र सरकारो ने सही प्रकार से इस फार्मूले पर कार्य नहीं किया है यदि आज भी सही इच्छाशक्ति के साथ इस फार्मूले पर कार्य किया जाए तो यह फार्मूला समस्त भारत के लिए वरदान साबित हो सकता है । हम लोगों को बड़ी तल्लीनता और मनोयोग से इस फार्मूले पर कार्य करने की जरूरत है ।

प्रश्न : जब भी देश में चुनाव करीब आते हैं आठवीं अनुसूची का मामला गर्मा जाता है, आठवीं अनुसूची में सम्मिलित होने की पंक्ति में लगी हिन्दी पट्टी की अन्य भाषाओं और बोलियों के विषय में आप क्या कहना चाहेंगे?

उत्तर : यह सब ठीक है हम लोगों ने तमाम तरीके की सूचियाँ-अनुसूचियाँ बना रखी है लेकिन इन सभी का इतना कोई खास मतलब नहीं है । क्या काम करना है भाषा के क्षेत्र में, बोलियों के क्षेत्र में इस पर गंभीरता से सब लोगों को विचार-विमर्श करना चाहिए ऐसी नीतियां बनानी चाहिए जिससे सभी भारतीय भाषाओं का संरक्षण हो व उनका विकास हो । जिन-जिन लोगों द्वारा भाषा के क्षेत्र में काम हो रहा है, बोलियों के क्षेत्र में काम हो रहा है उन लोगों को एक साथ बिठाकर परस्पर बातचीत करने की आवश्यकता है, उन लोगों की बातों को सुने और अपनी बातों को उनके समक्ष रखने की, आमने-सामने बैठे कर काम करने की आवश्यकता है, जनता को, समाज को जागरुक करने की आवश्यकता है इस तरीके से भाषा और बोलियों को अलग-अलग करके सूचियों में बांटकर कभी भी भाषा और बोलियों का विकास नहीं हो सकता ।

प्रश्न : आपको क्या लगता है कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा बनने का मुद्दा अभी जीवित है? 11वें विश्व हिन्दी सम्मेलन के मंच से हमारी विदेश मंत्री हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए गंभीर प्रयासों की बात कह चुकी है, क्या हिन्दी प्रेमी यह आशा रखें कि हिन्दी को जल्दी राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया जाएगा ?

उत्तर : घोषित करें या ना करें यह तो संवैधानिक बात हो गई, राजनीतिक बात हो गई, संसद की बात हो गई की घोषित कर दिया साहब अब अपना कार्य खत्म लेकिन घोषित करने से कुछ नहीं होता जब तक जनता की आकांक्षाएं उस भाषा के माध्यम से पूरी नहीं होती, जब तक जनता उसे दिल से स्वीकार नहीं कर लेती तब तक बात नहीं बनेगी । घोषित तो तमाम चीजें होती है, रोज होती है। यह दिल से स्वीकार करने की बात है । भाषा का मामला है, प्यार का मामला है, मर्यादा का मामला है, संस्कार का मामला है तो इस पर तो प्यार से ही कार्य करना होगा और करवाना होगा । आज लोग इसे स्वीकार भी कर रहे हैं । आज दुनिया के तमाम सारे देश जैसा मैंने पहले भी कहा है हिन्दी बोलते हैं और बड़े मन से बोलते हैं । हिन्दी तो जय की भाषा है, जयघोष की भाषा है, राज्यों की भाषा है, राष्ट्र की भाषा है, समुद्र तटीय इलाकों की भाषा है, रेगिस्तानी इलाकों की भाषा है, बरगली चोटियों की भाषा है, खतरनाक जंगलों की भाषा है तो हिन्दी किस की भाषा नहीं है ।

प्रश्न : आप हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठकों को क्या संदेश देना चाहेंगे ?

उत्तर : संदेश तो मैं नहीं देता, संदेश से ज्यादा जरूरी यह है कि लोगों में जागरूकता पैदा हो, लोग जागरूक बने अपने आप को खाचों में ना बांटे, अपने आप को खाचों में बंद न करें । वह अपनी मातृभाषा भी सीखे, हिन्दी भी सीखें और साथ ही अंग्रेजी भी सीखें क्योंकि जब तक आप अन्य भारतीय भाषाओं को अपनाएंगे नहीं तब तक विकास की जो प्रबल धारा है, प्रमुख धारा है उस पर चलने का कार्य नहीं होगा और साथ ही दुनिया की अन्य भाषाओं को भी सीखे। भाषा तो समझने की चीज है, सीखने की चीज है, आगे बढ़ने की चीज है। आप अपने मनोभाव को तभी तो व्यक्त कर पाएंगे जब आपके पास भाषा होगी और अच्छी भाषा, शानदार भाषा बड़े काम की होती है चाहे हिन्दी हो, अंग्रेजी हो या कोई भी अन्य भाषा हो लेकिन समृद्ध भाषा हमारी हिन्दी है इसलिए सब को हिन्दी सीखनी चाहिए जिनको अंग्रेजी आती है उनको भी जिनको तमिल, तेलुगू, कन्नड़, आती है उनको भी ।

साक्षात्कार : प्रो. गिरीश्वर मिश्र, पूर्व कुलपति, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा

भाषा के प्रश्न को अनन्त काल के लिए टालना समाज और देश की प्रतिभा एवं मौलिक विचार शक्ति पर कुठाराघात है।

प्रो. गिरीश्वर मिश्र

प्रो. गिरीश्वर मिश्र एक जाने-माने शिक्षाविद, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्री, लेखक एवं संपादक हैं। गोरखपुर विश्वविद्यालय से मनोविज्ञान में स्नातक एवं पीएचडी करने के उपरांत सन् 1970 में उसी विश्वविद्यालय में मनोविज्ञान विषय के व्याख्याता के रूप में कार्य करना आरंभ किया। दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर और मनोविज्ञान विभाग के पूर्व प्रमुख तथा कला संकाय के पूर्व डीन के रूप में भी कार्यरत रहें। इलाहाबाद और भोपाल विश्वविद्यालय में भी अध्यापन कार्य करने के अतिरिक्त आप जर्मनी, ब्रिटेन तथा अमेरिका के विभिन्न विश्वविद्यालयों में अतिथि अध्यापक रहें हैं। मनोविज्ञान के अलावा आपके विभिन्न विषयों में 25 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं। आप पांचवें आईसीएसएसआर सर्वे ऑफ साइकोलॉजी के प्रधान संपादक तथा नेशनल अकादमी ऑफ साइकोलॉजी, इंडिया और साइकोलॉजिकल स्टडीज के संपादक हैं। समाज विज्ञान के क्षेत्र में आपके योगदान को रेखांकित करते हुए आपको म. प्र. सरकार की ओर से हरिसिंह गौड़ राष्ट्रीय पुरस्कार, राधा कृष्ण पुरस्कार (म. प्र. उच्च शिक्षा आयोग) एवं गोविंद वल्लभ पंत पुरस्कार (केन्द्रीय गृह मंत्रालय) से सम्मानित किया गया है। आप महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय के कुलपति पद से सेवानिवृत हुए हैं।

प्रश्न : आपने कई महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित किया है। आप समाज में एक स्थापित व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं। हम आपकी अब तक की यात्रा के बारे में जानना चाहते हैं।

उत्तर : अध्ययन, अध्यापन, अनुसन्धान और प्रशासन के प्रसंग में मैं पिछले पचास वर्षों में देश और विदेश के विश्वविद्यालयों में अकादमिक क्षेत्र में सक्रिय रहा। उच्च शिक्षा का क्षेत्र युवा मानस की रचना से जुड़ा होता है जिसमें युवा वर्ग की ज्ञान, कर्म और भावनाओं को समझना, उसकी उलझनों को सुलझाना और दिशा देना महत्वपूर्ण होता है। बदलते देश काल में इनकी आशाओं और आकांक्षाओं का वितान जटिल और बहुरंगी होता गया है। मुझे गोरखपुर, इलाहाबाद, भोपाल और दिल्ली के भारतीय विश्वविद्यालयों में अध्यापन का सुअवसर मिला। मेरे में अपेक्षाकृत युवा अध्यापक के रूप में कार्य शुरू करने में एक आन्तरिक उत्साह और स्फूर्ति थी। यह अनुभव विविधतापूर्ण और बहु- आयामी था। जहाँ गोरखपुर और इलाहाबाद में स्थापित परम्पराओं के विभाग थे भोपाल में युवतम प्रोफेसर के रुप में एक नए विभाग की स्थापना का दायित्व और अवसर मिला। दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यक्ष के रुप में विभाग के शैक्षिक कार्यक्रम को नई दिशा देने का योग बना। संस्कृति, समाज, समय यानी संदर्भ के साथ मनोविज्ञान विषय को कैसे जोड़ा जाय इस पर गम्भीरता से कार्य शुरू हुआ। संगोष्ठियों, शोध- पत्रिकाओं, छात्रों के शोध, पाठ्य चर्या में बदलाव और पाठ्य सामग्री के निर्माण, कार्यशालाओं के आयोजन आदि के द्वारा सक्रिय और जीवन्त शैक्षिक परिवेश का निर्माण हुआ जिसका देशव्यापी प्रभाव पड़ा। इस लम्बी अवधि में चालीस छात्रों ने पी एच डी की उपाधि हेतु निर्देशन में कार्य किया, मनोविज्ञान विषय में दो सौ से अधिक शोध पत्र, बीस से अधिक पुस्तकें, शोध पत्रिका का सम्पादन और राष्ट्रीय मनोविज्ञान परिषद् का गठन और संचालन का कार्य भी किया। इसी अवधि में मिशिगन विश्वविद्यालय, अमेरिका, ससेक्स विश्वविद्यालय, इंग्लैंड और रूहर विश्वविद्यालय, जर्मनी, गज्दा मादा विश्वविद्यालय योग्याकर्ता, इंडोनेशिया, न्यू स्कूल ऑफ सोशल रिसर्च, न्यूयार्क आदि संस्थाओं में शोध और अध्यापन के कार्य से जुड़ने का अवसर मिला। चीन, स्वीडन,जर्मनी और दक्षिण अफ्रीका में आयोजित अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनों में भागीदारी की। यह मेरा सौभाग्य था कि सक्रिय व्यावसायिक जीवन में अगला पड़ाव महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा में कुलपति के दायित्व के रूप में उपस्थित हुआ। इस केंद्रीय विश्वविद्यालय के दायित्व के साथ मातृभाषा हिन्दी की सेवा का अवसर मिला। यह एक चुनौती भरा काम था। अन्यान्य कारणों से संस्था में अकादमिक परिवेश की जगह जड़ता और किंचित अव्यवस्था व्याप्त थी। मैने यथा संभव प्रयास कर वहां उपलब्ध सहकर्मियों के सहयोग से न केवल आवश्यक भौतिक आधार संरचना का निर्माण को अंजाम दे सका अपितु शिक्षण, प्रशिक्षण, शोध परियोजनाओं का संचालन, संवाद और प्रकाशन के लिए डिजिटल प्रौद्यौगिकी की सहायता से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कई तरह की सार्थक पहल भी शुरू कर सका। शब्द कोशों का निर्माण और प्रकाशन, विदेशी छात्रों को हिन्दी का अध्यापन, भारतीय भाषाओं, समाज विज्ञानों, प्रबंधन, तथा शिक्षा शास्त्र आदि विषयों के अध्यापन को आरम्भ कर ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप हिन्दी को स्थापित करने की दृष्टि से मेरे प्रयासों के संतोषदायी परिणाम भी हुए। प्रवासी भारतीयों में हिन्दी को संरक्षित और प्रोत्साहित करने के प्रयास हुए। हिन्दी विहग को उड़ने के लिए

विस्तृत आकाश उपलब्ध करने और उसके पंख को सुदृढ करने का प्रयास रंग लाने लगा । हिन्दी साहित्य में मेरी रुचि पहले से थी। आरम्भ में यह मनोविज्ञान से अधिक और अन्य विषयों से सीमित मात्रा में जुड़ी थी । वर्धा में आकर उसे नया जीवन मिला । मैने निश्चय किया कि हिन्दी में कार्य करने का अभ्यास, अध्ययन और लेखन नियमित रूप से करूंगा । मैने इस कार्य में नियमित रूप से जोड़ लिया। विगत पांच वर्षों में लगभग प्रति सप्ताह मैने समाज, भाषा, साहित्य, संस्कृति और उससे जुड़े विभिन्न प्रश्नों को लेकर लेखन कार्य जारी रखा और हिन्दी के राष्ट्रीय दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित किया। 'राष्ट्रीय सहारा' में प्रति रविवार 'प्रसंगवश' शीर्षक से एक स्तम्भ कई वर्ष तक नियमित चला। दैनिक जागरण, अमर उजाला, दैनिक भास्कर और लोकमत समाचार में भी लिखता रहा । इन लेखों और टिप्पणियों के चार संकलन आ चुके हैं : हिन्दी भाषा और समाज, होने और न होने का सच, हिरना समझि-बूझि बन चरना तथा प्रकाश की आकांक्षा । एक अंग्रेजी पुस्तक का अनुवाद 'जीने की एक राह यह भी', प्रकाशित हुई। इसके अतिरिक्त 'शमशेर बहादुर सिंह संचयिता' तथा साहित्य अकादमी के लिए 'विद्यानिवास मिश्र रचना संचयन' का सम्पादन किया है। नवें और दसवें विश्व हिन्दी सम्मेलनों के प्रतिवेदनों का सम्पादन भी किया। रूस और मॉरीशस में अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में शामिल हुआ । इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र द्वारा प्रकाशित 'कला तत्व कोश' के प्रथम खण्ड का हिन्दी रूपांतर किया । पुस्तक वार्ता और बहुवचन इन दो पत्रिकाओं का संपादन किया ।

प्रश्न : जब राष्ट्र और राष्ट्रीयता की बात होती है तो उसके साथ राष्ट्रभाषा का प्रश्न स्वत: ही आ जाता है । अब तक हम अपनी राष्ट्रभाषा घोषित नहीं कर पाये हैं। आपके अनुसार इसके क्या कारण हो सकते हैं?

उत्तर : यह ऐतिहासिक तथ्य है कि सभा और संविधान ने हिन्दी को राष्ट्र की अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त स्वीकार किया । साथ ही व्यवहार में अंग्रेजी की उपस्थिति जैसी गुलामी के दौर में भी उसे यथावत बनाए रखा गया। संस्कृत , हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की क्षमता को न समझते हुए उन्हें कमतर आंकते हुए उनके साथ दुविधा, उदासीनता और अन्यमनस्कता के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार शुरू हुआ । भारतीय भाषाओं के बीच अंतर संवाद की जगह अविश्वास को हवा मिली और उनको साहित्य और संस्कृति के अक्षय स्रोत और मानसिक रचनात्मकता की संवेदना और उपलब्धि की जगह राजनीति के औंजार के रूप में इस्तेमाल किया जाने लगा। यह युक्ति भाषा और राजनीति दोनों की दृष्टि से अदूरदर्शी साबित हो रही है।

प्रश्न : 11वें विश्व हिन्दी सम्मेलन के मंच से पूर्व विदेश मंत्री ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए गंभीर प्रयास किए जाने की बात कही थी । 14 सितम्बर, 2019 (हिन्दी दिवस) को माननीय गृहमंत्री ने भी 'एक राष्ट्र-एक भाषा' की बात कही है। क्या हिन्दी प्रेमी यह मान के चलें कि आने वाले दिनों में हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया जा सकता है ?

उत्तर : देश की संप्रभुता के लिए भाषा का महत्व निर्विवाद है क्योंकि भाषा सांस्कृतिक जीवन का माध्यम होता है । देश कोई भौगोलिक सत्ता मात्र नहीं होती है। वह चौतन्य के रूप में सजीव भी है । स्वराज और स्वाधीनता की परिकल्पना अपनी भाषा के विना अधूरी ही रहेगी। महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से लौट कर भारत को कर्म-भूमि के रूप में पहचानते हैं। उनके अपने आकलन में भारत की राष्ट्र भाषा के लिए हिन्दी/हिन्दुस्तानी ही उपयुक्त है। इस उददेश्य से उन्होने सकारात्मक प्रयास भी किया । हमें इस तथ्य की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए कि कला , संगीत , साहित्य ही नहीं ज्ञान-विज्ञान के विविध रूपों को मूर्त आकार देने और संरक्षित कर उसकी धारा को अगली पीढी तक प्रवाहमान बनाए रखने के लिए भाषा सबसे समर्थ माध्यम है । साथ ही जीवन जीने के लिए जरूरी संवाद भी भाषा के माध्यम से होता है। अपनी भाषा से रिश्ता काट कर अंग्रजों ने भारत की मानसिक गुलामी की पुख्ता नींव डाल दी और ऐसी घुट्टी पढ़ा गए कि अंग्रेजी एक भूत की तरह छा गई । चीन, जापान, फ्रांस , रूस, जर्मनी और इजराइल आदि देशों की प्रगति जग जाहिर है। उनकी प्रगति में देश की पूरी जनता की साझेदारी इसीलिए है कि वे अपनी-अपनी भाषाओं का उपयोग करते हैं । अपने यहां की तरह कोई विदेशी भाषा उनकी प्रगति में रोड़ा नहीं बनती है न अपनी भाषा जानने का कोई दंड ही भुगतना पड़ता है । अपने ही देश में अपनी भाषा का अपमान और उपेक्षा करते रहने वाले लोकतंत्र का प्रतिमान स्थापित करते हुए हम क्या सिद्ध कर रहे हैं यह समझ से परे है। यह जरूर दिख रहा है कि न्याय और तमाम सामान्य काम मँहगे, पहुँच से परे और मुश्किल होते जा रहे हैं। साथ ही रचनात्मकता और सृजनात्मकता की जगह नकल परस्ती ही बढ़ रही है । अब ऐसा तो है नहीं कि इनकी जरूरत केवल अंग्रेजीदां लोगों को ही पड़ती है। वैसे भी अनुमानत: अंग्रेजीदां लोग उच्च आर्थिक वर्ग से ही आते हैं और वे हर तरह से समर्थ होते हैं । अत: अंग्रेजी व्यावहारिक रूप से एक अभिजात वर्ग का वर्चस्व कायम रखने के लिए ही प्रयासरत है और इससे सामाजिक दूरी, विषमता और गरीबी-अमीरी का सीधा रिश्ता है। समानता, समता और भ्रातृ-भाव की आवश्यकता इससे पूरी नहीं होती है । सबके साथ सबके विकास की कल्पना साझे की भाषा से ही साकार होगी । यह एक खेदजनक त्रासदी है कि हिन्दी को ले कर संविधान की मूल व्यवस्था और भावना का (संवैधानिक तरीके से) तिरस्कार करते हुए अलग रास्ता अख्तियार करने का उपाय खोज निकाला गया जिसका कोई ओर

छोर ही नहीं दिखता । भाषा का सवाल अनंत काल तक के लिए मुल्तवी रखना समाज और देश की प्रतिभा और मौलिक विचार शक्ति पर कुठाराघात है। इस प्रक्रिया से संस्कृति की जड़ों से काटने का षडयंत्र जरूर पूरा हो रहा है। कहना न होगा कि भारत और उसकी अस्मिता के साथ इसका गहरा रिश्ता है और देश की एकता-अखंडता को ध्यान में रखते हुए भाषा के प्रश्न को टालना अहितकर है।

प्रश्न : नई शिक्षा नीति का जब प्रारूप आया तो उसके ठीक अगले दिन ही दक्षिण प्रांत के राज्यों के विरोध के कारण सरकार ने हिन्दी की अनिवार्यता शब्द को प्रारूप से हटा दिया । आप इसको किस रूप में देखते है ?

उत्तर : यह घटना पुरानी हो चुकी है। प्रथम दृष्टि में वह बदलाव जल्दबाजी का निर्णय लगता है तथापि लोकतंत्र में सभी की बातों को सुनना ही उचित होता है यह ध्यान में रखते हुए आरम्भ में विवाद से बचने की कोशिश की गई । दक्षिण के राज्यों के साथ संवाद होना चाहिए ।

प्रश्न : त्रिभाषा सूत्र को लेकर राज्यों में जो विवाद हैं उसके समाधान के लिए क्या उपाय किये जाने चाहिए ? एक बहु-भाषी राष्ट्र होने के कारण देश की शिक्षा नीति में त्रिभाषा सूत्र कितना उपयोगी है ?

उत्तर : भारत की भाषाई विविधता देश की सहित्यिक सांस्कृतिक समृद्धि का श्रोत है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि इन भाषाओं के बीच संवाद की कोशिश कम हुई । भारत के लोग भारत की भाषाओं से अपरिचय के कारण अनजान बने रहे । दो वर्ष पूर्व मैने वर्धा विश्वविद्यालय और साहित्य अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में हिन्दी, तमिल, मराठी, मलयालम, तेलुगू , कन्नड़ , बांग्ला आदि भारतीय भाषाओं के साहित्य की सांस्कृतिक संवेदना की पड़ताल की गई । यह देख कर सुखद अनुभूति हुई कि इन भिन्न-भिन्न भाषाओं के साहित्य में भारतीय मनुष्य, उसका परिवार और उसके निजी और सामाजिक सरोकारों की प्रकृति में क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद एक गहरी साझेदारी थी । एक तरह के जीवन के तनाव , संघर्ष , वेदना और संस्कृति सभी में झलक रही थी। एक भारतीय चेतना सबमें प्रति-विम्बित और प्रवाहित थी । वह किसी तरह का मिश्रण या जोड़ तोड़ न हो कर अद्‌भुत और भारतीय पहचान लिए हुए थी। अत: त्रिभाषा सूत्र स्वागत योग्य है। छात्रों को भिन्न प्रदेशों और क्षेत्रों की भिन्न भाषाओं को अनिवार्य रूप से सीखना चाहिए। अनुवाद की स्थाई और प्रभावी व्यवस्था होनी चाहिए ।

प्रश्न : संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित होने के लिए लगभग 40 से अधिक भारतीय भाषाएँ कतार में हैं, इस पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है? आठवीं अनुसूची के विवाद को आप किस रूप में देखते हैं?

उत्तर : आठवीं अनुसूची की व्यवस्था अब विभिन्न समुदायों की राजनैतिक महत्वाकांक्षा के साथ जुड़ गई है। भाषा को हथियार के तर्ज पर लिया जाने लगा है । भाषाओं और बोलियों के झगड़े शुरू हो गए हैं। ब्रज, भोजपुरी, अवधी और राजस्थानी के सूर, कबीर, तुलसी और मीरा अभी तक हिन्दी की गौरवशाली धरोहर हैं । उन पर कब्जा करने के लिए और हिन्दी को कमजोर करने के लिए आवाज उठ रही है । आठवीं अनुसूची में शामिल होने की व्यवस्था अकारण नए संघर्ष के रास्ते खुल रहे हैं। इसके प्रयोजन पर पुनर्विचार की आवश्यकता है ।

प्रश्न : वैज्ञानिक रूप से जब स्पष्ट हो चुका है कि प्राथमिक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो फिर भी हम इसे क्यों लागू नहीं कर पा रहे है?

उत्तर : निजी संस्थानों का दबाव और निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए अंग्रेजी के प्रति दुराग्रह इस स्थिति के मुख्य कारण हैं। जनता तो एक भ्रामक और अंशत: सही विश्वास पाले हुए है कि अंग्रेजी सफलता की सीढ़ी है। अंग्रेजी और नौकरी का रिश्ता उसका मुख्य कारण है। और तो और प्रदेशों की सरकारें भी ऐसे ही भ्रम पाल रही हैं। उत्तर प्रदेश की सरकार प्राथमिक स्तर पर अंग्रेजी की हिमायती है। महात्मा गांधी ने कभी कहा था कि 'आज तक हमारा काम और देसी व्यवहार हिन्दी में प्रारम्भ नहीं हो पाया, इसका कारण हमारी भीरुता, अश्रद्धा और हिन्दी भाषा के गौरव का अज्ञान है' । उनकी बात अभी भी लागू होती है।

प्रश्न : युवा पीढ़ी में हिन्दी को लेकर जो हीन भावना एवं वितृष्णा है उसके बारे में आप क्या कहना चाहेंगे ? इसे कैसे कम किया जा सकता है?

उत्तर : इस स्थिति के कई कारण हैं। सरकारी क्षेत्र में हिँदी को दोयम दर्जे की भाषा बना कर रखा गया है, औपचारिक क्षेत्र में उसकी सीमित प्रतिष्ठा है और आजीविका की दृष्टि से हिन्दी को ले कर भेदभाव है। हिन्दी की जगह अंग्रेजी अभी भी प्रमाणिक मानी जाती है। ऐसे हाल में हिन्दी की अवहेलना और उपेक्षा स्वाभाविक है। वस्तुत: भाषाई भेद से मानवाधिकार भी धूमिल होते हैं। अत:नीति के स्तर पर प्रभावी प्रयास किया जाना चाहिए ।

प्रश्न : आजकल युवाओं में बोलचाल के लिए हिंगलिश और लिखने के लिए रोमन लिपि का प्रयोग लगातार बढ़ रहा है । इससे भारतीय भाषाओं की लिपि पर संकट पर आप क्या कहना चाहेंगे?

उत्तर : डिजिटल युग में रोमन लिपि की उपस्थिति प्रबलता से दिख रही है। हिन्दी का अपना सरल की-बोर्ड आवश्यक है। कई नई सुविधाएँ अब उपलब्ध भी हैं । हिंग्लिश की पसंद और उपयोग भाषिक बदलाव और प्रौद्योगिकी के असर को बताता है । साथ ही वह भाषा के प्रति हममें गम्भीर नजरिए की कमी को भी व्यक्त करता है। भाषिक स्वाभिमान और गौरव बोध की कमी कई तरह से दिख रही है। वाक या वाणी की जगह अन्य तरह की अभिव्यक्ति एक तरह का प्रतिगमन ही है। हमें दृढता से देवनागरी लिपि को सुदृढ बनाना होगा।

प्रश्न : उच्च शिक्षा में हिन्दी की पुस्तकों का अभाव व हिन्दी में रोजगार के न के बराबर अवसर से हिन्दी पिछड़ रही है, इस पर आपकी क्या राय है?

उत्तर : यह एक कड़वी सच्चाई है । इस पर तत्काल ध्यान दिया जाना चाहिए। हिन्दी में पुस्तकों की स्थिति में कुछ सुधार हुआ है पर इस दिशा में निरंतर प्रयास किया जाना चाहिए । हिन्दी क्षेत्र के विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के योग्य शिक्षकों को इस कार्य में सन्नद्ध किया जाना चाहिए और यह कार्य निरंतर जारी रहना चाहिए । स्तरीय पुस्तक तैयार करना अध्यापन का अनिवार्य अंग बनाना चाहिए । रोजगार का सम्बन्ध विभिन्न क्षेत्रों में योग्यता और कुशलता से है। ऐसे प्रशिक्षण देने वाले हिन्दी माध्यम के संस्थान कम हैं और जो हैं वे खस्ताहाल हैं। शिक्षा की गुणवत्ता दिनोंदिन घटती जा रही है और उसमें सुधार की कोशिश को लेकर सरकारों में गंभीरता नहीं आ रही है। शिक्षा की बदहाली राष्ट्रीय चिन्ता का विषय है परंतु बेरोजगारी और अकुशल शिक्षकों की बढ़ती संख्या जैसे दुष्परिणाम देख कर भी आवश्यक कदम नहीं उठाए जा रहे हैं ।

प्रश्न : अंग्रेजी का दिन-प्रतिदिन बढ़ता रुतबा और सरकारी नीतियों के कारण हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाओं के भविष्य को आप किस रूप में देखते हैं?

उत्तर : भारतीय भाषाओं को यह चुनौती स्वीकार करनी चाहिए और अपनी सामर्थ्य बढ़ाने का उद्यम करना चाहिए । दूसरी ओर भारत की भाषाओं के प्रति नाइंसाफी के खिलाफ आवाज भी बुलंद करनी चाहिए। सत्ता को आगाह करने और चेताने की कोशिश लगातार जारी रखनी होगी ।

प्रश्न : आप हमारे पाठकों को, विशेष रूप से युवाओं को क्या संदेश देना चाहेंगे ?

उत्तर : भारतीय भाषाओं के उपयोग में किसी तरह की शर्म या लज्जा का अनुभव न करें। यह आदत बनावें कि संवाद , अभिव्यक्ति और प्रस्तुति का अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करना है। भाषाओं का रस पाने के लिए जरूरी होगा कि साहित्य का आस्वादन किया जाय। इसका लाभ न केवल तात्कालिक परिवेश को सहज बनाने के लिए होगा बल्कि सांस्कृतिक विरासत को समृद्ध करने में भी सहायता मिलेगी ।

पृष्ठ संख्या 5 का शेष

विभिन्न गोष्ठियाँ, कार्यशालाओं आदि के माध्यम से विद्यार्थियों को भारतीय भाषा पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते रहना चाहिए । भाषा बचेगी तो साहित्य बचेगा और संस्कृति भी बचेगी ।

इस सम्मान समारोह में दिल्ली प्रदेश के निजी, सरकारी एवं सरकारी सहायता प्राप्त 115 विद्यालयों के 300 भाषा शिक्षकों को सम्मानित किया गया । इन भाषा शिक्षकों के विद्यार्थियों ने वर्ष 2018-19 के 10वीं की बोर्ड परीक्षा में भारतीय भाषाओं (हिन्दी/संस्कृत/पंजाबी/बंगाली/उर्दू/गुजराती आदि) 90% से अधिक अंक प्राप्त कर उत्कृष्ट प्रदर्शन किया था । इस अवसर पर विभिन्न विद्यालयों के शिक्षकों द्वारा काव्य पाठ भी किया गया । समारोह के सफल आयोजन में अकादमी के सलाहकार श्री विजय शर्मा, हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के सह संपादक श्री राजकुमार श्रेष्ठ, सलाहकार एवं वरिष्ठ साहित्यकार श्रीमती सुरेखा शर्मा, श्री भूपेंद्र सेठी,श्रीमती सरोज शर्मा, श्रीमती सोनिया अरोड़ा, श्री पुलकित खन्ना, सुश्री विनीता शर्मा, श्रीमती सरिता गुप्ता, श्रीमती शकुंतला मित्तल, श्रीमती इंदुमति मिश्रा आदि ने महत्वपूर्ण योगदान दिया ।

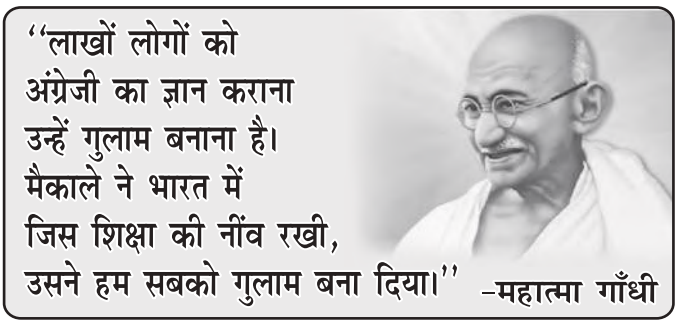

साक्षात्कार : डॉ. अनामिका, साहित्यकार

हिन्दी हमेशा लोक भाषाओं को गले लगाकर चली है।

हिन्दी भाषा साहित्य में डॉ. अनामिका एक चर्चित नाम है । समकालीन हिन्दी साहित्य में मूलचंद सर्वाधिक चर्चित कवियत्रियों में उनका नाम शामिल किया जाता है । बहु प्रतिभाशाली डॉ. अनामिका एक सशक्त कवियत्री, उपन्यासकार, कथाकार, आलोचक, अनुवादक एवं प्रखर वक्ता हैं । अंग्रेजी की प्राध्यापिका होने के बावजूद भी हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में आपने अमूल्य योगदान दिया है । डॉ. अनामिका जी की अब तक विभिन्न विधाओं में दर्जनों पुस्तकें प्रकाशित हैं । गलत पते की चिट्ठी, खुरदरी हथेलियाँ, प्रतिनायक, तिनका तिनके पास, दशद्वारे का पिंजरा, बीजाक्षर, स्त्री तत्व का मानचित्र इत्यादि आपकी प्रमुख पुस्तकें हैं । आपकी कई कविताओं का रूसी भाषा में अनुवाद हो चुका है । हिन्दी साहित्य में आपके योगदान को रेखांकित करते हुए आपको विभिन्न संस्थाओं द्वारा राष्ट्रभाषा परिषद् पुरस्कार, भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार, केदार सम्मान, ऋतुराज सम्मान, साहित्यकार सम्मान, साहित्य सेतु सम्मान सहित अनेक प्रतिष्ठित सम्मान और पुरस्कार से आपको सम्मानित किया गया है । वर्तमान में आप सत्यवती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग में अध्यापन करती हैं । दिल्ली स्थित उनके आवास पर हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के सदस्य श्री पुलकित खन्ना ने भाषा और साहित्य के कई महत्वपूर्ण विषयों पर उनसे बातचीत की। प्रस्तुत है बातचीत के कुछ अंश–

डॉ. अनामिका

प्रश्न : आप अंग्रेजी की प्राध्यापिका हैं और साथ ही हिन्दी कविता की एक अहम हस्ताक्षर भी है, आप अपनी इस यात्रा के बारे में संक्षेप में कुछ बताएं ।

उत्तर : मैं जिस जगह से हूँ (बिहार के मुजफ्फरपुर से) वहाँ पर पाँच-छः तरह की भाषिक नदियाँ एक दूसरे के गले मिलती हैं। मुझे लगता है कि हिन्दी एक ऐसा संगम तट है जहां कई तरह की भाषिक नदियों का जल बहता है। तो मुझे लगता है कि हिन्दी का जो पूरा मिजाज है, वह समन्वयवादी और संयुक्त परिवार वाला है। एक संयुक्त परिवार सब को मिलाकर चलता है, वहाँ कभी किसी का निषेध नहीं होता, वहाँ कोई अतिथि भी आता है तो वह अतिथि भी घर के सदस्य की तरह रह जाता है, घर के बरामदे में 4 लोगों के खाने में ही पांचवे का भी हिस्सा अपने आप निकल आता है। हिन्दी हमेशा लोक भाषाओं के साथ गले मिलकर चली है और साथ ही साथ जो नई भाषाएँ है पारसी, अंग्रेजी, फ्रांसीसी, डच उनके भी भाषिक संस्कारों से हिन्दी ने एक संवाद स्थापित किया है। हिन्दी की सबसे बड़ी खासियत है कि वह कभी भी तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशज में भेदभाव नहीं करती। वह सभी को एक ही चटाई पर बैठाती है और चूंकि मैं उसी भूभाग की हूँ जहाँ दुनिया का पहला गणतंत्र था आम्रपाली के समय, गुप्त के समय, महावीर जैन के समय तो मेरे संस्कारों में भी जनतंत्र है। मेरे मन में शुरू से ही यह भावना रही की सभी भाषाएँ गले मिलकर चले और एक दूसरे से संवाद रखें। मैंने पढ़ने को तो अंग्रेजी पढ़ी क्योंकि उस समय अग्रेंजी दुनिया की और भाषाओं की तरफ खिड़कियां खोलती थी। जब हम छोटे थे हिन्दी में ज्यादा अनुवाद उपलब्ध नहीं थे ज्यादातर अनुवाद अंग्रेजी में उपलब्ध थे तो मेरे मन में यह आया कि सेतु भाषा के रूप मैं यदि अंग्रेजी सीखती हूँ तो यह मेरे लिए अच्छा रहेगा। मेरे पिता की भी यही इच्छा थी कि अपनी भाषाओं की जो समृद्ध विरासत है, उसे मैं अंग्रेजी के माध्यम से फैला पाऊँ और विश्व साहित्य की विरासत है,वह मैं हिन्दी में लाऊँ तो जब मैंने स्नातक में दाखिला लिया, तब ही से इस दिशा में मुझसे जो बन पड़ रहा है, मैं वह सब कर रही हूँ।

प्रश्न : आज विद्यालयों में प्रारंभिक शिक्षा अँग्रेजी माध्यम से होती है और आठवीं कक्षा से हिन्दी को वैकल्पिक विषय बनाकर विदेशी भाषाएँ पढ़ायी जा रही है। हिन्दी के प्रति इस रवैये पर आप क्या कहना चाहेंगीं?

उत्तर : यह गलत है और मैं इसका एक सिरे से विरोध करती आई हूँ, लिखकर भी मैंने इस बात का विरोध किया है "बुक रिव्यू" का हिन्दी स्पेशल एक अंग था जिसमें मैंने लिखित दिया था कि यह जो आठवीं कक्षा में फ्रेंच, जर्मन और अन्य भाषाएँ सिखाई जा रही है, इससे बच्चे 4 बरस में नई भाषा तो सीख नहीं ही पाते, उनकी हिन्दी भी लंगडी हो जाती है। व्यक्ति का प्रेम करने का जो समय होता है, प्रेम व्यक्ति की धमनियों में सबसे ज्यादा 13 से 20 बरस की उम्र में होता है। ऐसी स्थिति में जो प्रेम प्रगाढ़ होना चाहिए था अपनी भाषा के प्रति वह प्रगाढ़ नहीं होता और बच्चे फ्लर्ट करने लगते हैं दूसरी भाषाओं से। एक तरह से संस्कार ही गलत पड़ जाते हैं। प्रेम करना चाहिए तो डूब कर करना चाहिए यह नहीं की तितली की तरह कभी इधर, कभी उधर। तीन- चार बरस में एबीसीडी सीखकर आप कहाँ तक सीख लेंगे कोई नई भाषा? विश्वविद्यालय में जब मैं छात्रों से बात करती हूँ तो मुझे लगता है कि जो विदेशी भाषाएँ उन्होंने विद्यालयों में सीखी थी वे उसमें तो एक पंक्ति भी नहीं बोल पाते और उस की तर्ज पर वे अपनी हिन्दी भी बिगाड़ लेते हैं। अन्य जगहों पर

ऐसा नहीं है वहाँ कम से कम 12वीं कक्षा तक अपनी भाषा पढ़ाई जाती है। आठवीं कक्षा से हिन्दी को वैकल्पिक बनाने वाले फैसले का कड़ा विरोध करती हूँ।

प्रश्न : भारत जैसे बहुभाषी देश में जहाँ भाषा रोजी-रोटी ही नहीं बल्कि राज्य और राजनीति का भी भविष्य तय करती है, भाषा के प्रति इस उपेक्षित रवैया का क्या कारण है ?

उत्तर : क्योंकि नेताओं और राजनेताओं की यह इच्छा ही नहीं है। वह अपनी नाक के आगे बढ़ ही नहीं पाते, उन्हें भाषा का मुद्दा लेकर चलना ही नहीं आता। वह आराम से संवाद करके लोगों को आश्वस्त ही नहीं कर पाते। इसके लिए वे कोई स्पष्ट योजना ही नहीं बना पाते और यदि कोई योजना बनती भी है तो उसका सही प्रकार से कार्यान्वय नहीं करते। सरकारी दफ्तरों का माहौल इतना खराब है कि बाएं हाथ से सब काम होते हैं। इस तरह से भाषा के प्रति कोई भी संकल्प पूर्ण नहीं हो पाता। मुझे लगता है यह बेहद जरूरी है कि भाषा के काम करने वाली जितनी भी संस्थाएं हैं, एकजुट हो और एक आदर्श लेकर चले। यदि हम लोग एकजुट होकर, एक शिष्टमंडल बनाकर लगातार अपनी बात का दबाव डालेंगे तो शायद हमारी बात सुनी जाएगी क्योंकि मिलकर चलने से ही कार्य सिद्ध होते हैं। यहाँ अकेली आवाज बहुत दूर तक नहीं जा सकती। मुझे तो लगता है सारी संस्थाओं का भी एक गठबंधन होना चाहिए जो एक प्रयोजन से चले और भाषा के लिए सार्थक कार्य करें।

प्रश्न : हमारी नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का ड्राफ्ट आ गया है लेकिन दो दिन बाद ही दक्षिण राज्यों के दबाव में हिन्दी को अनिवार्य भाषा वाले खंड को हटा दिया गया है आप इसे किस रूप में देखती हैं?

उत्तर : इसमें हम लोगों को एक नीति से चलना होगा क्योंकि जबरदस्ती करना तो जनतंत्र का स्वभाव नहीं है। आपको उन्हें आश्वस्त करना होगा की आप उनके साथ एक दोस्त की तरह रहेंगे न कि किसी प्रतिद्वंदी या दुश्मन की तरह, आप उनकी भाषा सीखेंगे और उसके विकास में सहायक होंगे। आप उस पर हावी नहीं होना चाहते। भय ही हमेशा अस्वीकृति को जन्म देता है तो हमें लोगों के मन में से इस भय को दूर करना है। धैर्य और संवाद से हम लोगों को धीरे-धीरे लोगों को आश्वस्त करना होगा की आखिर कोई तो भाषा सेतु भाषा होगी और तमिलनाडु की भाषा हम इसलिए सेतु भाषा के तौर पर नहीं रख सकते क्योंकि तमिलनाडु से बाहर के लोग वह भाषा नहीं समझ सकते। हिन्दी इकलौती ऐसी भाषा है जिसे संपूर्ण भारत में आसानी से समझा और बोला जाता है । मैं यह नहीं कह रही की हिन्दी श्रेष्ठ है, मेरे कहने का तात्पर्य सिर्फ इतना है कि व्यवहारिक कारणों से, लोगों को जोड़ने के लिए जो भाषा उपलब्ध है, आप उसी को तो बनाएंगे सेतु भाषा। यह संवाद से, शिष्टमंडलों के संवाद से ही हो जाएगा। सामान्य लोग तो खुद-ब-खुद हिन्दी को अपनाए बैठे हैं यह तो श्रेष्ठ जनों ने ही अविश्वसनीय कम किया है।

प्रश्न : जब त्रिभाषा फार्मूले की असलियत हम सबके सामने प्रस्तुत है तो ऐसी स्थिति में क्या आज त्रिभाषा फार्मूला का कोई औचित्य बचा है?

उत्तर : एक शास्त्रीय भाषा सीखनी चाहिए, यह जरूरी तो है लेकिन वह महाविद्यालय के स्तर पर भी सीखी जा सकती है। बच्चों को तीन भाषाएँ सीखनी चाहिए- एक अपनी मातृभाषा, एक राष्ट्रीय भाषा और एक अंतर्राष्ट्रीय महत्व की सम्पर्क भाषा। महाविद्यालय के समय एक भाषा का विकल्प होना चाहिए जो कि एक शास्त्रीय भाषा का हो जिससे पुराने ग्रंथो को समझ सके और उनमे अनुवादक भी कर सके। लेकिन जो हिन्दी प्रदेशों से बाहर के लोग हैं, उन्हें अपनी मातृभाषा के बाद हिन्दी अवश्य सीखनी चाहिए क्योंकि भारत में संपर्क की भाषा हिन्दी है। बच्चे सबसे पहले अपनी मातृभाषा सीखे, उसके बाद हिन्दी और अंग्रेजी जो भी भाषा वे सीखना चाहते हैं वह महाविद्यालय के स्तर पर आकर सीखें।

प्रश्न : कई बार भारत की भाषिक विविधता एक समस्या के रूप में भी देखी जाती है। हिन्दी पर वर्चस्वादी होने का आरोप भी लगता है आपका क्या मत है इस आरोप पर?

उत्तर : यदि हिन्दी वर्चस्ववादी भाषा होती तो इसमें चार रजिस्टर न बने होते तद्भव, तत्सम, देशज, विदेशज, अगर हिन्दी वर्चस्ववादी भाषा होती तो इतना लंबा इंतजार न करती। हिन्दी कभी किसी पर जबरदस्ती आरोपित नहीं हुई वह हमेशा सभी को प्रेम से ही गले लगा रही है तो वर्चस्ववादी होना तो इसका स्वभाव ही नहीं है। इसका जन्म तो आधुनिकता के गर्भ से हुआ है। हिन्दी के लगभग जितने भी बड़े साहित्यकार हुए हैं वे किसी न किसी लोकभाषा से अवगत रहे हैं। जिन भाषा क्षेत्रों से वे आते हैं उस भाषा के समानांतर विकास के लिए वे हमेशा उत्सुक रहे हैं। आप मुक्तिबोध को ले लीजिए। वह महाराष्ट्र के थे हिन्दी में उनका अहम स्थान है लेकिन इसी के साथ मराठी में भी उनका योगदान उतना ही ज्यादा है। ऐसे ही बहुत से हिन्दी के साहित्यकार है जो अपने यहाँ की भाषा, वहां की संस्कृति के प्रति जागरूक हैं। मुझे नहीं लगता हिन्दी के किसी भी लेखक या आपके जैसा एक सचेतन, क्रांतिकारी युवा के मन में किसी भी अन्य भाषा के लिए कोई पूर्वाग्रह होगा। हिन्दी तो खुले मन की भाषा है और इसके संयुक्त परिवार वाले संस्कार हैं।

प्रश्न : देश में चुनाव आते ही आठवीं अनुसूची का मुद्दा गरमा जाता है। आठवीं अनुसूची में सम्मिलित होने की पंक्ति में लगी हिन्दी पट्टी की अन्य उप भाषाओं और बोलियों के विषय में आप क्या कहना चाहेंगीं ?

शेष पृष्ठ संख्या 18 पर

चमत्कार लोक भाषाओं का

डोगरी लोक गीतों की विधा - भाख

हर भाषा का लोकसाहित्य, उसकी मूल्यवान सम्पत्ति होता है क्योंकि उसी के बल पर वह भाषा समृद्ध होती चलती है । लोकसाहित्य लोकजीवन की अभिव्यक्ति है, वह जीवन से घनिष्ठता से सम्बंधित है । लोकसाहित्य एक पारिभाषिक शब्द है जो लोक तथा साहित्य से मिल कर बना है । लोक शब्द आरंभिक साहित्य में वेद के साथ भी मिलता है । लोक वेद की चर्चा भी सुनी जाती है, किंतु वेद में कही गई बात वैदिक और लोक में कही गई बात लौकिक होती है । इस प्रकार सारी पौराणिक कथाएँ वैदिक और वेद से निकल कर लौकिक कहलाएँगी । वास्तव में लोकसाहित्य शब्द अंग्रेजी के फोकलिट्रेचर का अनुवाद है । 'लोक'मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो अभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता और पाण्डित्य की चेतना और अहंकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित रहता है । ऐसे लोक की अभिव्यक्ति में जो तत्व मिलते हैं, वह लोक तत्व कहलाते हैं। डोगरी भाषा का भण्डार भी, अन्य भारतीय भाषाओं की भाँति ही समृद्ध और विशाल है । हिन्दी में बहुत कम अनुवादित होने के कारण, इससे हिन्दी पाठक अभी भली-भाँति परिचित नहीं हो पाया है । लोक साहित्य की हर विधा, लोक कथा,लोक गीत, मुहावरे, पहेलियाँ, कहावतें, लोकोक्तियाँ आदि से भरा-पूरा है डोगरी भाषा का संसार ।

डोगरी लोक गीतों का भंडार तो लोक कथाओं से भी विशाल है और इसमें निरंतर कुछ न कुछ जुड़ता चला जाता है । जहाँ कहीं कुछ नया घटित हुआ या किसी घटना, वस्तु अथवा दृष्य ने लोककवि को आकर्षित किया, तत्क्षण गीत का मुखड़ा फूट पड़ा और उसकी स्वरलहरियां फूट कर वायुमंडल में प्रवाहित हो चलीं । डोगरी लोकगीतों को हम मुख्य रूप से 6 भागों में बाँट सकते हैं-

(1) भाख (2) गीतड़ू (3) भजन (4) गाथा (5) पर्व-संस्कार गीत (6) श्रम गीत

यहाँ हम डोगरी लोकगीतों की अति प्रसिद्ध और व्यापक विधा 'भाख'पर विस्तार से चर्चा करेंगे ।भाख शब्द वाक् से निकला है । यहाँ से यह बिगड़ कर 'भाख'में परिवर्तित हो गया, ऐसा अनुमान है ।

भाख किसी भी मेले, विवाह, या दंगल तथा खुशी के अवसरों पर गाई जाती है । यह भाख गायक अपने दोनों कानों को अंगुलियों से बंद करके, भावविभोर होकर गाता है । यत्न यही कि उसे बाहर की ध्वनि न सुनाई दें । इस गायन में किसी वाद्य यन्त्र का प्रयोग नहीं होता।

भाख के मुख्य रूप से दो प्रकार हैं-

(1) लम्बी भाख (लम्मी या झिक्की भाख) (2) छोटी भाख (हुच्छी भाख या चलंत भाख) भाख का सारा दारोमदार गायकों के मधुर स्वर, लय, और ताल पर निर्भर करता है । इसके गायन में किसी वाद्य उपकरण का उपयोग नहीं होता । यह समूह में गाई जाती है । गायक जोड़ी की संख्या 5 से 8 तक होती है, पर कहीं-कही 9 या 10 भी हो सकते हैं ।

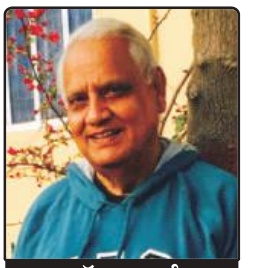
डॉ. आदर्श

भाख का आरम्भ एक विशेष पंक्ति से होता है, जैसे- "चल बैरु'आ ख्यालिया. .....''। फिर जब इसी पंक्ति को गीत के अंत में जब दोहराया जाता है, तब वह गीत की समाप्ति का सूचक होता है । इसे भाख फेरना कहते हैं । एक जोड़ी जब भाख फेरती है तो दूसरी आरम्भ कर देती है ।

इस प्रकार स्पर्धा में बैठी सभी जोड़ियाँ, बारी-बारी गीत गाती हैं और यह स्पर्धा दो-दो दिन तक चलती रहती है । एक बार जो जोड़ी जिस गीत को गा लेती है, उसकी पुनरावृत्ति नहीं की जा सकती । कुछ ऐसे आशु कवि भी इन गायकों में होते हैं, जो उसी समय नए गीतों की करना करके गाते हैं ।

लम्मी भाख- यह तीन प्रकार की है- (1) बुल्हालती भाख (2) सुमरती भाख (3) बन्द्रहाली भाख

1) बुल्हालती भाख :

जिला उधमपुर के 42 गाँव बुल्हालता क्षेत्र में आते हैं । इस क्षेत्र में गाए जाने वाली भाख को बुल्हालती भाख कहा जाता है, लेकिन यहाँ की भाख केवल इसी क्षेत्र तक सीमित न होकर, इसका प्रभाव सुमरती और बन्द्रहाली भाख पर भी देखा जा सकता है । इतना ही नहीं,इसका प्रभाव बमाघ, रियासी-पौनी आदि क्षेत्रों की भाख पर साफ रूप से देखा जा सकता है । गीत का मुखड़ा आरम्भ करने वाले गायक को 'मेड़ी'कहते हैं । मुखड़ा आरम्भ होने के बाद दूसरा सर्वाधिक सुरीले कण्ठ वाला गायक, गीत के बोल ऊपर उठाता है, इसे 'सुआई'कहते हैं। सुआई देने वाले को सुआई देने वाला कहते हैं । गीत की पंक्ति की समाप्ति से पहले, तीसरा गायक 'सुआई'को फिराते हुए आगे बढ़ाता है और और जोड़ी के शेष गायक, उसके स्वर में स्वर मिलाते हुए गीत को 'भरथी'देते हैं ।

इस भाख में गीत का छन्द एक ही है । गीत के पद में कुल 30-34 मात्राएँ होती हैं और इसमें 8-20 और 2-16 पर यति रहती है। मात्राओं में एकाध मात्रा की कमी गायक अपने सुर-ताल से पूरी कर लेता है ।

इस भाख के कुछ उदाहरण-

(क) पारलिया धारा कविया बोले मियें चढ़े शकार ओ .....।
कविया शविया होंदा नेईये पिंजजड़ पाडाण मार ओ.....।
अऊं ल्योन्ना लकडियां तूं छल्ल पतील्लू चाढ़ ओ .....।

(ख) हीरेया हरणां जंगल चरणां सिड. तेरे सलाइयां ओ ....। सिडै. तेरे पर केह-केह लिखेया तित्तर ते मुरजाइयां ओ .....। अल्ल्हडे वैह् (बैई) गे तित्तर भाइया उड्ड गेइयां मुरगाइयां ओ....। जिन्हें सज्जनैं दियां साखां चरणां उंदियां चिट्ठियां आइयां ओ.....।

पंज सत्त मुंडे किट्ठे होंदे जोड़ बन्दूकां लाइयां ओ .....। हरण बचारा मार लेया ते मासे पत्तियां पाइयां ओ .....। हरणी बचारी छम-छम रोन्दी हाए सिरे देआ साइयां ओ .....। यहाँ यह स्पष्ट कर देना जरूरी है कि बुल्हालती भाख गायकों की जोड़ियाँ पुरूषों की ही होती हैं ।

2) सुमरतीभाख :

इस भाख का क्षेत्र बहुत विस्तृत है । वैसे तो यह भाख " सुमरता "क्षेत्र की उपज है, परन्तु पैमास्ता के पूर्वी भाग से आरम्भ होकर बसोहली-महानपुर तक गाई जाती है । कण्डी क्षेत्र, विशेष कर साम्बा तहसील के उत्तरी भाग में भाख पर भी इसका स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है । इस भाख में अश्लीलता की झलक भी कहीं-कहीं होती है परन्तु अश्लील शब्दों को गायक इस ढंग से चबा लेते हैं कि श्रोताओं को इसका आभास तक नहीं हो पाता । बुल्हालती भाख जहाँ केवल पुरुष ही गाते हैं, वहीं सुमरती भाख गाने वाले मर्दों और औरतों की जोड़ियों में डट कर मुकाबला होता है ।राणों मेघन , कुंजू आदि इसके प्रसिद्ध गायक रहे हैं ।

3) बन्द्राहलती भाख :

लम्बी या झिक्की भाख में, सुमरती के बाद बन्द्रहलती भाख का स्थान है । यह अपने क्षेत्र बन्द्राहलता तक ही सीमित है । साधारणतया इस भाख के गायन की परम्परा पुरुषों तक ही सीमित है। यह भाख लय, सुर, और ताल की दृष्टि से, बुल्हालता और पहाड़ी भाख का मिश्रण या उसके बीच की भाख कही जा सकती है। इसका एक उदाहरण देखिए- ओ दुर्गू बा मनैं दी कुंड़ी दिन्दी सैंखियै दी पुड़ी नन्दा प्राण दिन्दा छुड़ी है नग्गरों पुल्स आई ऐ टुरी बे हाँ-ऽऽऽऽऽए जी ।

छोटी (चलन्त या हुच्छी) भाख :

हुच्छी भाख, स्वर, लय, ताल आदि की दृष्टि से चलन्त और छोटी होती है ।सुआई दिये बिना भी इस भाख को गाया जा सकता है ।इसके अन्तर्गत प्हाड़ी, मरठेआली, और म्हाशकी भाख आती है । यहाँ यह साफ करना भी उचित होगा कि पहाड़ी क्षेत्र में भाख की अपेक्षा नृत्य गीत अथवा गीतडूओं का ही अधिक प्रचलन है ।भाख गायन की परम्परा कम है और यह विधा इतनी लोकप्रिय नहीं है । इन तीनों प्रकार की भागों का क्षेत्र सीमित है ।

क) प्हाड़ी भाख :

इस भाख का प्रचलन पूरे पर्वतीय क्षेत्र में है जो जम्मू के पार हिमाचल तक है । यह एक ऐसी भाख है जिसे फेरमां भाख भी कह सकते हैं । प्राय: इसका आरम्भ स्वच्छन्द में होता है और एक या दो पंक्तियों के बाद गीत छन्द बद्ध हो जाता है । स्त्री व पुरुष इसे मिल कर गाते हैं और स्वतन्त्र जोड़ियों में भी गाते हैं । उदाहरण देखें-

अम्बर सर थमां गुजरी व्याही ऐ प्योकै कट्टे साल चार ऽऽऽऽऽऽ
सोह्हे गुजरी बसदी नेईं ऐं प्योकै कट्टे साल चार ऽऽऽऽऽऽऽ
ए हाँ-काल काग करेड़ै-म्हीना भादरो बी नेड़ै - 2
बेही काग ओआइयां लान्दा बानो गुजरी दी मौत सुनान्दा ।
स्योजा गुज्जरैं ने किन्ति दलेरी लाड़ी अपनी छुड़ी लमकेरी ।
गुलाबदीन ऐं बड़ी पुट्ठी चोटी हत्थ लिस्कै बन्दैं वाली सोटी।
चुक बोतलां झोलैं बिच पाइयां चढी पुलसां डुड्डू शैहर आइयां ।
पुट्टै कलेजा कोह्वदी माता तेरी छम-छम रोन्दी ।
चुक्की लाश ते कबरी दबाई ऐ बानो गुजरी दी कण्त्थ मुकणई ऐ ।

ख) मरठेआली भाख :

चनैहनी तहसील में एक पहाड़ी गाँव है 'मरोठी'जहाँ मरठेआल जाति के ठक्कर रहते हैं । इन ठाकुरों में एक विशेष प्रकार की भाख का प्रचलन है । इसकी गेयता शैली बिलकुल भिन्न है । यह भाख किसी क्षेत्र विशेष की न होकर, जाति विशेष की भाख है, और इसी जाति से इसका नाम भी जुड़ा हुआ है । यह भाख करुण रस या भक्ति रस प्रधान है । इसमें डोगरी शब्दों के साथ हिन्दी शब्द भी मिले हुए हैं । व्यंजनों में चौथा वर्ण, तीसरे वर्ण के सदृष्य उच्चारित होता है । 'ऐ' की मात्रा प्राय: 'ए' में परिवर्तित हो जाती है । इस भाख के गीतों की संख्या भी सीमित ही है ।

एक गीत की पंक्तियाँ देखिए - (इन गीतों का वर्ण्य विषय ईश्वरीय चमत्कार हैं)

एक द्रख्त पर घुग्गी बैठी
हेठ बैठा शकारी ।
उपर बाज फराटियां मारे बीच में घिरी बचारी ।
उस राम दे खेल न्यारें ट
करता लीला न्यारी ।

आगे भाख में चमत्कारिक बात है। भयानक सर्प शिकार को काट लेता है । शिकारी का तीर छूट कर 'बाज'को लगता है और धुग्धी की प्रार्थना भगवान सुन लेता है क्योंकि सच्चे मन से की गई प्रार्थना को ईश्वर सुनता ही है ।

ग) म्हाशकी भाख :

इस भाख का सम्बंध भी क्षेत्र विशेष से न होकर, मरेठाली भाख की भाँति जाति विशेष से है ।म्हाशा जाति को लगता है कि गीत-संगीत में गन्धर्व वरदान उन्हें ही प्राप्त है । यह जाति भाख को एक अलग शैली में गाती है । गीत का प्रथम पद गद्य की भाँति मुखिया बोलता है और दूसरे पद को शेष गायक स्वर में स्वर मिला कर गाते हैं । उदाहरण देखिए -

धुब्बन पानिए गी चली ऐ - -
ए सु'हा नैआ घग्घरा बी लाइये नां ऽऽऽ- 2
बेही झरोखें रानी चतेंदी ऐ
मैह्ल्लें गी कुण कोई साकन आइये नां ऽऽऽ-2
देई ततूनी गोल्ली छुहान्दी ऐ - -
ओ मैह्ल्लैं गी साकन आइये नां ऽऽऽ-2
औन्दी धुब्बनी दी खातर होंन्दी,
दित्तीऐ खीर रन्हाइये नां ऽऽऽऽ-2
धुब्बन बचारी खाना बौहन्दी
सारी गेई संभाइये नां ऽऽऽ-2
खन्दैं -खन्दैं टुम्ब उठदी ऐ
धुब्बन गेई कलमाइये नां ऽऽऽ-2

इस प्रकार अन्य गीतों के उदाहरण देकर इनके विभिन्न रूपों को दर्शाया जा सकता है, लेकिन स्थानाभाव के कारण एक उदाहरण ही दिया गया है । इस प्रकार इस पहाड़ी लोक गीत विधा ' भाख 'का शाब्दिक विस्तृत परिचय तो हमने हिन्दी पाठक से करवाया, लेकिन इस विधा का असली आनंद सुन कर ही लिया जा सकता है । पर्वतीय शांत वातावरण में जब एक के बाद एक स्वर लहरियाँ वातावरण में तरंगित होती चली जाती हैं, तब समय हाथ बाँधे , एक ओर खड़ा का खड़ा रह जाता है।

डॉ. आदर्श
25 एम.आई.जी., हाउसिंग कॉलोनी, उधमपुर-182101
(जम्मू कश्मीर)

पृष्ठ संख्या 15 का शेष

उत्तर : यदि उनका स्वतंत्र विकास हो भी जाएगा तो इसमें क्या बुराई है, जैसे समझिए की किसी देशज भाषा का अपना संविधान हो जाता है, अपना अस्तित्व हो जाता है, अपनी एक अकादमी हो जाती हैं, उसमें अकादमी का पुरस्कार मिलने लगते हैं जैसे मैथिली के साथ हुआ, तब भी उसके हिन्दी के साथ संबंध खराब तो नहीं हुए हैं। अब जैसे नागार्जुन हैं उन्होंने जितना हिन्दी में लिखा उतना ही मैथिली में भी लिखा। मान लीजिए भोजपुरी या अन्य कोई भाषा अपना एक अलग अस्तित्व बना ले लेकिन फिर भी उसका दादी भाषा या नानी भाषा या घर वाली भाषा के रूप में हिन्दी से तारतम्य बना ही रहेगा क्योंकि गोत्र एक ही है। इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। मन नहीं करता कि अपने परिवार से लोग अलग हो, अलग घर बसाएँ लेकिन अगर जरूरत होती है तो घर अलग बन भी जाते हैं लेकिन फिर भी प्रेम बना रह सकता है।

प्रश्न : आपको क्या लगता है कि हिन्दी के राष्ट्र भाषा बनने का मुद्दा अभी भी जीवित है?

उत्तर : हिन्दी राष्ट्रभाषा इस अर्थ में है कि तमिलनाडु से लेकर अन्य राज्यों में भी हिन्दी ही है जो आपका संवाद रिक्शा वाले से लेकर अन्य सभी व्यक्तियों से कराती है। तमिलनाडु वाले क्षेत्र में आप अंग्रेजी बोल सकते हैं क्योंकि वहां के विद्यालयों में अंग्रेजी अच्छी तरह से सिखाई जाती है लेकिन उसके अलावा बाकी राज्यों में केवल हिन्दी ही है जो आपका संवाद सभी से करा सकती है। वंचित जनों की भाषा, सड़क-समाज की भाषा, जो हाशिए के लोगों की सेतु भाषा है वह हिन्दी ही है तो राष्ट्रभाषा तो वह बन चुकी है सिनेमा और सिनेमा के गानों की भाषा, धारावाहिकों की भाषा भी वही है आम आदमी को यह नहीं पता की किस भाषा के लेखक कौन होंगे। सड़क के आदमी को इससे क्या मतलब है। वह तो इसी भाषा को अपनी भाषा समझता है।

प्रश्न : हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठकों को क्या संदेश देना चाहेंगीं ?

उत्तर : आप लोगों का उद्देश्य सुन कर मैं निश्चिंत हुई, मुझे चैन की सांस आ गई यह देख कर की आपके जैसे युवक इस संस्था से जुड़े हैं। विद्यालयों के स्तर पर, विद्यालयों के धरातल पर जा कर आप लोग जो कार्य कर रहे हैं, वह बेहद सराहनीय है क्योंकि विद्यालय ही वह स्थान है जहाँ भाषा बनती है और व्यक्ति की दृष्टि बनती है। बाद में तो आप उसे धीरे-धीरे विकसित कर सकते हैं लेकिन जो जड़े हैं, वह विद्यालय में ही अंकुरित होती हैं। विद्यालयों को जो आप लोगों ने चुना हैं वह बेहद अच्छा किया है। प्रेम का समय भी वही होता है, विकास का समय भी वही होता है और स्मृतियां बनाने का समय भी वही होता है बल्कि मैं तो मानती हूँ कि बचपन की स्मृतियां हमारा फिक्स डिपाजिट होती है। वही हमारे जीवन-भर काम आती है। बचपन की स्मृतियों की जो निधि है, वह अंत समय तक काम आती है तो आप लोग बच्चों के लिए, शिक्षकों के लिए जिस प्रकार कार्य कर रहे हैं, वह बेहद सराहनीय कार्य है, आप लोग इसी तरह भाषा के लिए कार्य करते रहें, आपको ढेर सारी शुभकामनाएं।

चमत्कार लोक भाषाओं का

डोगरी भाषा-कुछ महत्वपूर्ण तथ्य

प्रो. शरद नारायण खरे

वैसे भारत में अनेक भाषाएं व बोलियां प्रचलित हैं । अनेक संविधान में मान्य हैं,पर यदि हम डोगरी की बात करें तो डोगरी भारत के जम्मू और कश्मीर प्रान्त में बोली जाने वाली एक भाषा है। वर्ष 2004 में इसे भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया है। पश्चिमी पहाड़ी बोलियों के परिवार में, मध्यवर्ती पहाड़ी पट्टी की जनभाषाओं में, डोगरी, चंबयाली, मडवाली, मंडयाली, बिलासपुरी, बागडी आदि उल्लेखनीय हैं।डोगरी इस विशाल परिवार में कई कारणों से विशिष्ट जनभाषा है। इसकी पहली विशेषता यह है कि दूसरी बोलियों की अपेक्षा इसके बोलने वालों की संख्या विशेष रूप से अधिक है। दूसरी यह कि इस परिवार में केवल डोगरी ही साहित्यिक रूप से गतिशील और सम्पन्न है। डोगरी की तीसरी विशिष्टता यह भी है कि एक समय यह भाषा कश्मीर रियासत तथा चंबा राज्य में राजकीय प्रशासन के अंदरूनी व्यवहार का माध्यम रह चुकी है। इसी भाषा के संबंध से इसके बोलने वाले डोगरे कहलाते हैं तथा डोगरी के भाषाई क्षेत्र को सामान्यत: 'डुग्गर' कहा जाता है। रियासत जम्मू कश्मीर की शरतकालीन राजधानी जम्मू नाम का ऐतिहासिक नगर, डोगरी की साहित्यिक साधना का प्रमुख केंद्र है, जहाँ डोगरी के साहित्यिकों का प्रतिनिधि संगठन 'डोगरी संस्था' के नाम से, इस भाषा के साहित्यिक योगक्षेम के लिये गत लगभग 60 वर्षो से प्रयत्नशील है।डोगरी पंजाबी की उपबोली है – यह भ्रांत धारणा डॉ. ग्रियर्सन के भाषाई सर्वेक्षण के प्रशंसनीय कार्य में डोगरी के पंजाबी की उपबोली के रूप में उल्लेख से फैली। इसमें उनका दोष नहीं। उस समय उनके इन सर्वेक्षण में प्रत्येक भाषा, बोली का स्वतंत्र गंभीर अध्ययन संभव नहीं था।जॉन बीम्ज ने भारतीय भाषा विज्ञान की रूपरेखा संबंधी अपनी पुस्तक (प्रकाशित 1866 ई.) में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि डोगरी ना तो कश्मीरी की अंगभूत बोली है, ना पंजाबी की। उन्होंने इसे भारतीय-जर्मन परिवार की आर्य शाखा की प्रमुख 11 भाषाओं में गिना है। डॉ. सिद्धेश्वर वर्मा ने भी डोगरी की गणना भारत की प्रमुख सात सीमांत भाषाओं में की है। डोगरी की अपनी एक लिपि है जिसे टाकरी या टक्करी लिपि कहते हैं। यह लिपि काफी पुरानी है। गुरमुखी लिपि का प्रादुर्भाव इसी से माना जाता है। कुल्लू तथा चंबा के कुछ प्राचीन ताम्रपट्टों से ज्ञात होता है कि इस लिपि का प्रारंभिक रूप में विकास 10 वीं-11वीं शताब्दी में हो गया था। वैसे टाकरी वर्ग के अंतर्गत आने वाली कई लिपियाँ इस विस्तृत प्रदेश में प्रचलित हैं जैसे लंडे, किश्तवाड़ी, चंबयाली, मंडयाली, सिरमौरी और कुल्लूई आदि। डॉ. ग्रियर्सन शारदा को और टाकरी को सहोदरा मानते हैं। श्री व्हूलर का मत है कि टाकरी शारदा की आत्मजा है।

टाकरी लिपि आज भी डुग्गर के देहाती समाज में बहीखातों में प्रयुक्त होती है। इसका एक विकसित रूप भी है जिसमें कई ग्रंथों का प्रकाशन हुआ है। कश्मीर नरेश महाराज रणवीर सिंह ने, आज से लगभग एक सौ वर्ष पूर्व अपने राज्यकाल में, डोगरी लिपि में, नागरी के अनुरूप, सुधार करने का प्रयत्न किया था। मात्रा, चिह्नों के प्रयोग को अपनाया गया तथा पहली बार नई टाकरी लिपि में डोगरी भाषा के ग्रंथों के मुद्रण की समुचित व्यवस्था के लिये जम्मू में शासन की ओर से रणवीर प्रेस की स्थापना की गई है । डोगरी की नव साहित्यिक चेतना के साथ ही साथ टाकरी का स्थान देव नागरी ने ले लिया। डोगरी संश्लेषणात्मक भाषा है। इसी के प्रभाव से इसमें संक्षेपीकरण की असाधारण प्रवृति पाई जाती है जो इसे विशिष्ट बनाती है ।

-प्रो. शरद नारायण खरे
विभागाध्यक्ष इतिहास
शासकीय जे.एम.सी. महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)-481661

डॉ. जीतराम भट्ट, सचिव, हिन्दी अकादमी, दिल्ली का सम्मान करते हुए अकादमी के पदाधिकारी श्री राजकुमार श्रेष्ठ एवं श्री भूपेन्द्र सेठी

हिंगलिश और भविष्य की हिन्दी : बदलते दौर में भी हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल

किशोर दिवसे

भारत और विदेशों में भी हिन्दी का भविष्य मुझे निश्चित रूप से उज्ज्वल दिखाई देता है । बाजार युग में हालांकि समाज के भीतर मानसिकता के अवरोध हैं फिर भी हर हाल में हिन्दी का बहुआयामी विकास भारत ही नहीं वरन विदेश में अब भी साफ दिखाई दे रहा है । आज के माहौल और समूचे परिदृश्य पर गौर करने और वर्तमान कमजोरियों का सूक्ष्म परीक्षण करने के उपरांत भी मेरे इस आशान्वित होने का मूल आधार भी आज की परिवर्तनशील सामाजिक बुनियाद ही है । यथार्थ यही है कि तकनालॉजी का विकास भी हिन्दी को शिखर पर पहुंचाने के लिए कटिबद्ध प्रतीत होता है । आइए एक-एक कर हिन्दी की परिधि से जुड़े मुद्दों को समझने की शुरुआत करते हैं अतीत से । छायावादी युग की हिन्दी ने वाया मध्यकालीन हिन्दी,आधुनिक हिन्दी के मिक्स्ड फ्लेवर के बाद उत्तर आधुनिककालीन युवा तेवर की स्पाइसी साहित्यिक और तेजतर्रार हिन्दी के अनेक स्वादों को चखा है । हिन्दी की युगीन विकास यात्रा के दौरान प्रकाश स्तंभ बनी समस्त महाविभूतियों का नामोल्लेख करना नामुमकिन होगा । अतएव कहीं सूत्र और अन्यत्र सोदाहरण समझना उचित रहेगा ऐसा मुझे लगता है । वैसे हिन्दी भाषा का क्रमिक विकास हजार वर्ष प्राचीन प्राकृत गलियारे से शुरू हुआ । बाद में आजादी पूर्व का त्रासद और पश्चात के हिंगलिश और इलेक्ट्रॉनिक मेगास्क्रीन पर यूथ-मेनिया के तेवर बेहद पसंदीदा हैं, इसकी नजीर हर जगह हिन्दी भाषा और बोली में साफ नजर आती है। मैं पत्रकार रहा हूं, मीडिया की बात करना चाहूंगा । दिल्ली से ही छपना शुरू हुए अखबार जनसत्ता ने प्रिंट मीडिया की हिन्दी में स्थानीय बोली का तड़का लगाकर पाठकों को परोसा था । हिंगलिश के संदर्भ में वही सुपरहिट फार्मूला आज भी अनेक राज्यों के अखबार और पत्रिकाएं स्थानीय बोली के अलावा उर्दू और अंग्रेजी के शब्द शामिल कर हिन्दी को अधिक स्वीकार्य बनाने के लिए अपना रहे हैं । विज्ञापनों की दुनिया ने भी हिन्दी-अंग्रेजी का तालमेल/घालमेल करने के बावजूद हिन्दी का परिदृश्य सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तारित किया है । विदेशों में भी हिन्दी का अध्यापन अनेक विश्वविद्यालयों में हो रहा है । सात समंदर पार बसे भारतीय समुदाय की हिन्दी अध्ययन में रुचि है, पर ठोस योजनाओं की जरूरत नई पीढ़ी को प्रोत्साहित करने की है । अब आज के दौर में यह सवाल मन में उठना भी लाजमी है कि आखिर हिंगलिश के प्रादुर्भाव का मूल कारण क्या हो सकता है ?भाषा विज्ञान तथा मनोविज्ञान के सिद्धांतों के अलावा व्यवहारिक नजरिये से भी अगर सोचा जाय तो देखने में यह आता है कि क्लिष्ट हिन्दी का सरलीकरण कालांतर में बाजार नियंत्रित जीवन शैली की वजह से परिवर्तनशील समाज ने खुले रूप में स्वीकार किया है । लौह पथगामिनी के बदले रेल या ट्रेन, लौह पथगामिनी निर्देशक संकेत पट्टिका के बदले रेलवे सिग्नल,पाद कंदुक के बदले फुटबॉल, क्षणिक दुग्ध शर्करायुक्त चौतन्य चूर्ण मिश्रित उत्तेजक गर्म पेय के बदले दो अक्षरों का सरल शब्द चाय का प्रयोग करना आम जनमानस को भाता हैं । दुनिया की पहली अंतरराष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी में प्रति वर्ष 25000 नए शब्द जुड़ते हैं । इस वजह से अंग्रेजी 53 देशों में विज्ञान, कंप्यूटर, साहित्य, राजनीति और उच्च शिक्षा की मुख्य भाषा बनी हुई है । वैश्वीकरण और उदारीकरण उत्तर आधुनिक भारत में विकास का प्रमुख औजार हैं ।

युवा वर्ग की सुपर स्मार्ट सोच पूरी रफ्तार से गांव-शहर-महानगर होते हुए विदेश में बसने की सोच बना चुकी है । उनके लिए हिन्दी कोई मसला ही नहीं है । बावजूद इसके विदेशों के कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा सीखने के प्रति आकर्षण का निरंतर बढ़ना आशान्वित करता है । विदेशों में बसे भारतीयों का हिन्दी प्रेम भी सर्वविदित है । एक रोचक किस्सा आपको यहां बताना चाहूंगा । क्लिष्टतम हिन्दी में एक साहित्यकार ने पुस्तक लिखी । किसी पाठक ने तंज कसा कि अगर यह पुस्तक हिन्दी में लिखी जाती तब अधिकांश पाठकों की समझ में आती । अर्थात सरल हिन्दी की पक्षधरता बढ़ती जा रही है । मीडिया और लेखन के प्रति रुझान बीते वर्षों में तूफानी तेजी से बढ़ा है । समाचार, स्तंभ यानी कॉलम,स्वत: के ब्लॉग,फिल्मों की पटकथा लेखन,आकाशवाणी व दूरदर्शन में कार्य,विज्ञापन निर्माण और डबिंग के अलावा शिक्षक और व्याख्याता बनने हिन्दी का उपयोग तेजी से बढ़ा है । हिन्दी से दिगर भाषाओं में तथा अन्य भारतीय भाषाओं से हिन्दी में अनुवाद, साहित्य के विकास के नजरिए से आज की अहम् आवश्यकता बन चुकी है । एक नीम सच भी है कि हिंगलिश के संदर्भ में भाषाई कौमार्य पर खड़ा किया गया शुचितावादियों का बखेड़ा अब सोशल मीडिया की आंधी में औचित्यहीन साबित हो चुका है । भाषा या कहें हिन्दी के तेवर निजी या बाजार की आवश्यकता के अनुरूप बदलने लगे हैं । लिहाजा हिन्दी की जरूरत अलहदा क्षेत्रों में चेहरे बदलकर अपना प्रभुत्व बढ़ाती ही रहेगी । हिन्दी को हिंगलिश से ज्यादा खतरा भाषा को राजनैतिक मुद्दा बनाया जाना है । हिन्दी भाषा के विकास से जुड़ी शासकीय, अशासकीय और निजी स्तर पर भी अनेकानेक गतिविधियां और संगठन देश और विदेश में संचालित हैं । फिर भी

अनुभवजन्य तथ्य यही हैं कि हिन्दी का विकास हिन्दीभाषी प्रदेशों में अच्छा है लेकिन आत्ममुग्धता और गैरजरूरी प्रदर्शन से हिन्दी का विकास बाधित है । उतना नहीं जितना प्रदर्शित किया जाता है । अपने अनुभव की बात कहूं तो हिन्दी भाषी राज्यों में सक्रिय जीवन बिताने के बाद अहिन्दी भाषी राज्य में आकर रहने वाला व्यक्ति हिन्दी भाषा की रुदाली को साफ सुन सकता है । निश्चित रूप से अगर देश भर में शासकीय तौर पर गठित राष्ट्रभाषा प्रचार समितियों को यदि आम जनमानस से जोड़ने, हिन्दी को अहिन्दी राज्यों की विषाक्त भाषाई राजनीति से अलग करने और राष्ट्भाषा हिन्दी को प्रत्येक भारतीय के दिल में थोपकर नहीं वरन सम्मानपूर्वक प्रतिस्थापित करने की जमीनी योजना बनाया जाना जरूरी है । दरअसल मसला अब तक किए गए कार्यों की निरंतर मॉनिटरिंग और आम जनमानस को भाषाई मसलों पर क्षेत्रीय-राष्ट्रीय बायस से मुक्त करने का है । हिन्दी के विकास में अन्य अवरोध गौण हैं । क्या आजादी के बाद से भारत में ही पूरी तरह हिन्दी आम जनबोली बन सकी है? देश का प्रत्येक नागरिक आरोप-प्रत्यारोप की बजाय आईने से यह सवाल पूछे तो अपना ही प्रतिबिम्ब विकृत दिखाई देगा । आम मानसिकता में पहले से मौजूद यह महाभ्रम समूल मिटाना शीर्ष वरीयता होना चाहिए कि आपकी मातृभाषा कोई भी हो राष्ट्रभाषा हिन्दी का सम्मान हर नागरिक का कर्तव्य है । बहुभाषी होना और पसंदीदा देशी-विदेशी भाषा सीखना व्यक्तित्व विकास के लिए अनिवार्य है । आप खुद ही एक प्रयोग कीजिए ।

चार लेख- 1. क्लिष्टतम हिन्दी, 2.उर्दू मिश्रित हिन्दी, 3. अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी और 4.सरल बोली की हिन्दी में लिखें । लोकप्रियता/पाठकीय स्वीकार्यता और सम्प्रेषणीयता आदि बिंदुओं पर लघु शोध करें । आज के युग में हिन्दी के जनप्रचार हेतु सर्वाधिक सहज मानदंड या पैरामीटर्स और निष्कर्ष भी बतौर अध्येता आपके ध्यान में आ जाएंगे । नहीं नहीं... मैं कठिन हिन्दी के प्रति न दुराग्रही हूं न सरल हिन्दी का हिमायती । जीवन के किस क्षेत्र में कैसी हिन्दी चल रही है उसे परखिए । बोलचाल, रचनात्मक लेखन (लेख, कहानी व कविताएं) साहित्यिक किताबों, पत्रिकाओं, संपादकीय, फिल्मों, नाटकों, शोध-कार्य अध्यापन या कंटेंट राइटिंग के दौरान कैसी हिन्दी आपके सामने है? आपको साफ पता चल जाएगा कि लेखन शैली की विविधता को अंतस में समाहित कर हिन्दी विश्वव्यापी हो रही है। गौर कीजिए मित्रो, आज गांव से महानगर तक हम सब सूचना-तकनीकी क्रांति के चरम पर हैं । रोटी, कपड़ा और मकान की बुनियादी जरूरतों में मोबाइल और डिजिटल इंडिया का जगमग होता चेहरा देश की अनिवार्य जरूरतों में शामिल हो चुका है । इंटरनेट या अंतरजाल और सोशल मीडिया की उच्च तकनीक ने निश्चित रूप से हिन्दी को वैश्विक मंच पर प्रतिष्ठित किया है । सात समंदर पार देशों में हिन्दी के विकास की यशोगाथा खूब बखानें फिर भी स्मरण रहे कि आईना हमेशा छद्मवाद की पोल खोलता है । हिन्दी भाषा विकास का मनोविज्ञान ध्यान में रखकर, नीतिगत लकवा दूर करने निरंतर जनभागीदारी होनी चाहिए । हिन्दी का देश और सात समंदर पार विकास के लिए मूल भावना हिन्दी थोपना नहीं उसे भारतीय नागरिक के दिल से जोड़ना है । हिंगलिश कोई अवरोध नहीं हिन्दी के चहुंमुखी विकास में । अपने मानसपटल के आईने में चेहरा देखकर कमजोरियां दूर करें और हिन्दी का विकास अन्य भाषा-बोलियों के स्नेहालिंगन महसूस कर करते रहें । विश्व के आदिकाल से उत्तर आधुनिक काल तक के समस्त भाषा मनीषियों का भारत को स्वर्णिम आशीष प्राप्त है-हिन्दी हमारी आन, बान और शान हमेशा से थी...है और रहेगी । जय हिन्दी....जय भारत....

-किशोर दिवसे
203-वरद रेसीडेंसी, सैफायर पार्क रोड
बालेवाडी, पुणे-411045

विशेष सूचना

'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' त्रैमासिक पत्रिका के आगामी अंक हेतु लेख आमंत्रित हैं ।

हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के आगामी अंक हेतु हिन्दी भाषा से संबंधित विविध विषयों पर लेख/आलेख एवं शोध सामग्री भेजें । पत्रिका के स्थायी स्तम्भ 'चमत्कार लोक भाषाओं का' के अंतर्गत किसी एक भारतीय भाषा को विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जाता है । अब तक बुंदेली, कुमाऊँनी, भोजपुरी, छतीसगढ़ी, पंजाबी, राजस्थानी, नेपाली, मैथिली, अवधी एवं पूर्वोत्तर राज्यों की भाषाओं के लेख प्रकाशित हो चुके हैं । पत्रिका के आगामी अंक हेतु कृपया संस्कृत भाषा की वर्तमान स्थिति एवं हिन्दी के बीच अंतरसंबंध, हिन्दी भाषा साहित्य में संस्कृत का योगदान, शिक्षा और रोजगार के बीच संस्कृत भाषा की चुनौती, संस्कृत साहित्य और पाठकों की रुचि आदि से संबंधित सारगर्भित लेख नीचे दी गई ई-मेल पर भेंजे ।

hindustanibhashabharati@gmail.com

-राजकुमार श्रेष्ठ, सह सम्पादक

''जब तक आपके पास
राष्ट्रभाषा नहीं,
आपका कोई राष्ट्र भी नहीं।''
-मुंशी प्रेमचन्द

चिंदी-चिंदी होती हिन्दी

हिन्दी क्षेत्र की बोलियों को संविधान की अष्टम अनुसूची में शामिल करवाने की होड़ |

डॉ. मोतीलाल गुप्ता 'आदित्य'

यूँ तो विभिन्न राजनैतिक, आर्थिक एवं धार्मिक कारणों से काफी पहले ही हिन्दी का राष्ट्रीय स्वरूप विकसित हो गया था लेकिन राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिन्दी ने खुलकर राष्ट्रीय स्तर पर संपर्क भाषा की भूमिका निभाई । इसके कारण हिन्दी ने निर्विवाद रूप से राष्ट्रभाषा की छवि बना ली थी। यही वजह थी कि प्राय: सभी स्वतंत्रता सेनानियों ने जिनकी मातृभाषा भले ही कुछ भी क्यों न रही हो स्वतंत्रता के पश्चात हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने की पैरवी की थी। लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात राष्ट्रीय भावनाओं के बजाए राजनैतिक परिस्थितियों के चलते हिन्दी को राष्ट्रभाषा के बजाए भारत संघ की राजभाषा का दर्जा मिला। यह बात अलग है कि आज भी ज्यादातर देशप्रेमियों के मन में हिन्दी की जगह राष्ट्रभाषा की ही है। फिर माँग हमेशा उठती रही कि विश्व के अन्य देशों की तरह हिन्दी को भारत की राजभाषा के बजाए भारत की राष्ट्रभाषा बनाया जाना चाहिए। भोपाल में आयोजित 10वें विश्व हिन्दी सम्मेलन में यही बात भारत सरकार के माननीय गृहमंत्री श्री राजनाथ सिंह ने भी रखी कि हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा होना चाहिए।लेकिन दूसरी ओर संघ की राजभाषा हिन्दी को अब नई-नई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। भारत में लाभ-लोभ के चलते बंटने और बांटने की प्रवृत्ति कोई नई नहीं है। भारत में विदेशी दासता का मुख्य कारण भी यही प्रवृत्ति थी। तमाम बाहरी और भीतरी चुनौतियों से संघर्ष कर रही हिन्दी को सबसे बड़ी चुनौती अब इसी प्रवृत्ति के कारण मिलने लगी है। क्षेत्रीय आकांक्षाओं के राजनैतिक माँग के चलते जब संविधान संशोधन के माध्यम से मैथिली, संथाली और डोंगरी जैसी बोलियाँ अलग भाषा के रूप में स्थान पा गईं। इसके चलते जो लोग स्वयं को हिन्दी-भाषी कहते थे अब वे स्वयं को हिन्दीभाषी मानने से बचने लगे हैं और हिन्दी से दूरी बनाने लगे है।

मैथिली और डोंगरी को संविधान की अष्टम अनुसूची में स्थान मिलने के बाद तो मानो 'बांटो और राज करो' जैसी मानसिकता वाले नींद से जाग कर सक्रिय हो गए। अवधी, बृज, भोजपुरी, बुंदेली, राजस्थानी आदि हिन्दी क्षेत्र की अनेक बोलियाँ वोट बैंक के जरिए अष्टम अनुसूची में जगह पाने के लिए जोर लगा रही हैं। दक्षिण अफ्रीका में आयोजित नवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में सर्वप्रथम डॉ अमरनाथ द्वारा यह मामला उठाया गया । उन्होंने कहा कि यदि भारत की बोलियों को भी अष्टम अनुसूची के अंतर्गत भाषा का दर्जा दे दिया जाने लगा तो उसके दूरगामी दुष्परिणाम होंगे। उन्होंने उस कथित साजिश का भी खुलासा किया जो अंग्रेजी-समर्थकों द्वारा हिन्दी के खिलाफ बड़े ही दबे-छिपे हुए ढंग से रची जा रही थी । जब यह मामला सामने आया तो सभी भारतीय भाषा-प्रेमी, राजभाषा-प्रेमी सन्न रह गए। बात बिल्कुल सही है कि हिन्दी भाषी क्षेत्र जिसे राजभाषा नियमों में 'क' क्षेत्र कहा गया है, उस क्षेत्र में बोली जाने वाली सभी बोलियों आदि को यदि अष्टम अनुसूची के अंतर्गत भाषा का दर्जा दे दिया गया तो एक-एक कर सभी बोलियां और उपबोलियां इस होड़ में शामिल होने के लिए जोर लगाने लगेंगी। राजनीतिक महत्वकांक्षा और वोट बैंक की राजनीति के चलते यह सिलसिला अंतहीन होता जाएगा। जब हर क्षेत्र में हर बोली भाषा का दर्जा प्राप्त कर लेगी तो प्रश्न यह उठता है कि भारत में हिन्दी भाषी कौन होगा ? निश्चित तौर पर भारत में हिन्दी भाषा न केवल दुनिया के स्तर पर बल्कि भारत के स्तर पर भी सबसे कम लोगों की भाषा होगी। कुछ लोग जो स्वयं को हिन्दी का साहित्यकार कहते हैं या शहरों में बस वे लोग जो गाँवों-कस्बों से या अपने क्षेत्र से कट चुके हैं और पूरी तरह अंग्रेज नहीं बने हैं वे ही जनगणना में मातृभाषा के रुप में अपनी भाषा हिन्दी लिखवाएँगे। ऐसी स्थिति में संख्या के गणित के चलते हिन्दी भारत की राजभाषा ही नहीं बल्कि किसी राज्य की राजभाषा होने लायक भी नहीं रह जाएगी। भाषायी विघटन का यह मामला यहीं समाप्त नहीं होगा । मामला और आगे बढ़ा तो फिर भारत की अन्य भाषाओं में भी यह प्रक्रिया शुरु होगी और भारत की विभिन्न भाषाओं की बोलियाँ अथवा उनके स्थानीय रूप भी अष्टम अनुसूची में शामिल होने के लिए मचलने लगेंगे । संविधान की अष्टम अनुसूची में स्थान पा कर उस कथित बोली या भाषा के कथित साहित्यकारों की तो दुकानें चल निकलेगी और नेताओं को नए-नए वोट बैंक मिलने लगेंगे। लेकिन इसके परिणामस्वरूप धीरे-धीरे भारत की भाषा-बोलियां आपस में लड़कर सब खत्म होती जाएँगी। अंग्रेजों की नीति थी बांटो और राज करो, इसी नीति के तहत पुराने राजे-रजवाड़ों की तरह हम अपनी भाषाओं की चिंदी-चिंदी उड़ाकर अंग्रेजी के साम्राज्य को और अधिक व सशक्त रूप से स्थापित होने में पूरा योगदान देने लगे हैं ।

जो लोग यह कहते हैं कि वे लोकभाषा के साहित्य को आगे बढ़ाने के लिए ऐसी माँग कर रहे हैं तो यह प्रश्न खड़ा होता है कि क्या अष्टम अनुसूची में शामिल न होने पर लोक साहित्य या बोली-भाषा के साहित्य सृजन पर कोई प्रतिबंध है ? जो अपनी बोली का प्रयोग नहीं करते क्या अष्टम अनुसूची में शामिल होने के चलते वे अचानक उसका प्रयोग करने लगेंगे ? जो अपनी मातृभाषा या बोली का प्रयोग आज नहीं करते वे किसी अनुसूची में जुड़ने से कल भी नहीं करेंगे।

यह भी उल्लेखनीय है कि हिन्दी के मंचों से हिन्दी क्षेत्र की विभिन्न बोलियों की रचनाओं का पाठ सदा से होता आया है क्योंकि इन्हें कभी हिन्दी से अलग समझा ही नहीं गया। हिन्दी का अभिन्न अंग होने से इन बोलियों का साहित्य पूरे देश में,दुनिया में पहुंचता है लेकिन हिन्दी से अलग हो कर ये बहुत ही सीमित दायरे में सिमट कर राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान खो देंगी ।हिन्दी क्षेत्र की बोली भाषाओं के स्वयंभू मठाधीशों और कथित संरक्षकों के चश्मे से देखें तो तुलसीदास, सूरदास, कबीरदास, जायसी, भूषण, बिहारी, जयदेव, मतिराम, मीराबाई, विद्यापति सहित ज्यादातर कवि जो हिन्दी साहित्य के आधार-स्तंभ हैं, जिन्हें पूरे देश में हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत पढ़ा या पढ़ाया जाता है, हिन्दी क्षेत्र की बोलियों और उपबोलियों आदि के कवि होकर क्षेत्रीय कवि हो कर रह जाएंगे। पता नहीं यह उनके साथ न्याय होगा या अन्याय ? हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त प्रोफेसर कृष्ण कुमार गोस्वामी, जिन्होंने भाषा-बोली आदि विषय पर विस्तृत अध्ययन किया है। वे कहते हैं, "भाषाविज्ञान की दृष्टि से भाषा और बोली में कोई अंतर नहीं माना जाता। संरचना के स्तर पर भाषा जहां ध्वनि-संयोजन, शब्द-संपदा,व्याकरणिक व्यवस्था आदि विभिन्न घटकों और उनकी विभिन्न इकाइयों में संबंध स्थापित कर अपना संश्लिष्ट रूप ग्रहण करती है, वहाँ वह विभिन्न सामाजिक स्थितियों से भी संबंध स्थापित करती है। साथ ही, वह विविध प्रयोजनों और संदर्भों में भी प्रयुक्त होती है। इसलिए भाषा और बोली के प्रयोग में तीन निश्चित संदर्भ सामने आते हैं और वे हैं रूपपरक, ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भ। रूपपरक दृष्टि से बोली भाषा का क्षेत्रीय-प्रभेदक शैली-रूप है। इसे एक निश्चित शब्द-समूह और व्याकरणिक संरचना द्वारा पहचाना जाता है।

भाषा की विविधता जब उसके प्रयोक्ताओं के भौगोलिक क्षेत्र अथवा स्थान का परिणाम होती है तब वह क्षेत्रीय बोली कहलाती है। उनका यह भी कहना है कि भारत की जनगणना 2001 के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1,02,86,10,328 थी जिनमें हिन्दी को मातृभाषा या प्रथम भाषा बोलने वालों की संख्या 42,20,48,642 थी जो भारत की कुल जनसंख्या का 41.03 प्रतिशत है । उर्दू बोलने वालों की संख्या 5,15,36,111 थी जो कुल जनसंख्या का 5.01 है। इसी प्रकार मैथिली बोलने वालों की संख्या 1,21,79,122 थी जो कुल जनसंख्या का 1.18 है। यदि इन सब को जोड़ दिया जाए तो हिन्दी बोलने वालों की संख्या 47.22 होती है। द्वितीय और विदेशी भाषा के रूप में भी हिन्दी बोलने वालों की संख्या देश-विदेश में बहुत अधिक है। मैथिली की तरह अगर अन्य बोलियों की संख्या को भी घटा दिया गया तो हिन्दी के राजभाषा के दर्जे पर भी सवाल उठ सकता है। यही नहीं संविधान में इतनी भाषाएँ आ जाएंगी तो देश पर कितना आर्थिक बोझ पड़ जाएगा, स्तरीय साहित्य में कमी आएगी, भाषायी विवाद बढ़ेगा, लेखकों तथा साहित्यकारों में पुरस्कारों की होड़ लग जाएगी, आदि अनेक समस्याएँ खड़ी हो जाएँगी।

इस मुद्दे पर जब हिन्दी के प्रोफेसर और सुप्रसिद्ध कवि अशोक चक्रधर से चर्चा हुई तो उन्होंने कहा- 'यह इस देश का दुर्भाग्य है कि यहाँ लोग छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए अपनी ही भाषा की चिंदी-चिंदी करने पर आमादा हैं। जो लोग हिन्दी क्षेत्र की बोलियों को संविधान की अष्टम अनुसूची में शामिल करवाने की बात कर रहे हैं, ऐसा नहीं है कि उन्हें उस बोली की बहुत चिंता है। ज्यादातर लोग निहित स्वार्थों के कारण ऐसा कर रहे हैं ।'

वे कहते हैं- 'बृजभाषा जो मेरी बोली भी है, यदि इसे अष्टम अनुसूची में शामिल नहीं किया गया तो क्या उसमें साहित्य रचना पर कोई प्रतिबंध है। अब वह हिन्दी साहित्य का अभिन्न अंग है पूरे देश में हिन्दी साहित्य में पढ़ाई जाती है। लेकिन जो लोग ऐसी माँग के जरिए बोली विशेष के लोगों को लामबंद कर अपने हित साधना चाहते हैं उनका उद्देश्य ही अलग है। ऐसी हरकतों के चलते ही हिन्दी को संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाषा बनने में सफलता नहीं मिली, संख्या कम पड़ गई ।' वे आगे कहते हैं, 'अगर हम चीन का उदाहरण लें, जिनकी भाषा मंदारियन है, वहाँ भी हमारी तरह अनेक बोलियाँ वगैरह हैं। लेकिन लाभ-लोभ के चलते अलगाव की बात वहाँ नहीं है । सब मंडारियन को पूरे देश की भाषा मानते हैं। मैं समझता हूँ कि अगर आज किसी बोली को अष्टम अनुसूची में स्थान देने की बात हुई तो न जाने कितने क्षेत्रीय महत्वाकांक्षा और लाभ-लोभवादी डंडा-झंडा लेकर खड़े हो जाएँगे। मैं इसे अनावश्यक व दुर्भाग्यपूर्ण मानता हूँ । '

यह मुद्दा हिन्दी के अस्तित्व के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है । इसलिए वे सब लोग जिन्हें भारत की भाषाओं से प्रेम है, उन सभी को चाहिए कि वे इस खतरे के प्रति न केवल सचेत रहें बल्कि दूसरों को भी जागरूक करें। अन्यथा भाषावार संख्या की दृष्टि से आने वाले समय में अपने आपको विश्व-भाषा कहने वाली हिन्दी भारत के किसी राज्य की भाषा भी नहीं रह सकेगी। आज जो अपने आपको हिन्दी भाषी कहते हैं कल वे स्वयं को अवधी, ब्रज, हरियाणवी, राजस्थानी,छत्तीसगढ़ी, मालवी, भोजपुरी आदि लिखवाने लगेंगे। आइए इन सभी बिंदुओं पर गंभीरतापूर्वक विचार करें और बोलियों को भाषा के रूप में संविधान की अष्टम अनुसूची में शामिल किए जाने की माँगों के प्रति अपना विरोध भी व्यक्त करें। साथ ही भारतीय भाषाओं की चिंदी-चिंदी उड़ाने को तत्पर बोलियों के ठेकेदारों को भी इन खतरों के प्रति आगाह करें और हिन्दी की सभी बोलियाँ एक सूत्र में बंधकर अपना विकास सुनिश्चित करें।

डॉ. मोतीलाल गुप्ता 'आदित्य'
निदेशक, वैश्विक हिन्दी सम्मेलन
ए-104, चंद्रेश हाइट्स, जैसल पार्क, भायंदर पूर्व, मुंबई-401105

शिक्षा को प्रभावी बनाने के लिए राष्ट्र को भाषा की दरकार है !

प्रो. गिरीश्वर मिश्र

कुछ बातें प्रकट होने पर भी हमारे ध्यान में नहीं आतीं और हम उनकी उपेक्षा करते जाते हैं और एक समय आता है जब मन मसोस कर रह जीते हैं कि काश पहले सोचा होता । भाषा के साथ ही ऐसा ही कुछ होता है । भाषा में दैनां दिन संस्कृति का स्पंदन और प्रवाह होता है । वह जीवन की जाने कितनी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है । उसके अभाव की कल्पना बड़ी डरावनी है । भाषा की मृत्यु के साथ एक समुदाय की पूरी की पूरी विरासत ही लुप्त होने लगती है । कहना न होगा कि जीवन को समृद्ध करने वाली हमारी सभी महत्वपूर्ण उपलब्धियां जैसे-कला, पर्व, रीति-रिवाज आदि सभी जिनसे किसी समाज की पहचान बनती है उन सबका मूल आधार भाषा ही होती है । किसी भाषा का व्यवहार में बना रहना उस समाज की जीवंतता और सृजनात्मकता को संभव करता है । आज के बदलते माहौल में अधिसंख्य भारतीयों द्वारा बोली जाने वाली हिन्दी को लेकर भी अब इस तरह के सवाल खड़े होने लगे हैं कि उसका सामाजिक स्वास्थ्य कैसा है और किस तरह का भविष्य आने वाला है। हिन्दी के बहुत से रूप हैं जो उसके साहित्य में परिलक्षित होते हैं पर उसकी जनसत्ता कितनी सुदृढ है यह इस बात पर निर्भर करती है कि जीवन के विविध पक्षों में उसका उपयोग कहां, कितना, किस मात्रा में और किन परिणामों के साथ किया जा रहा है । ये प्रश्न सिर्फ हिन्दी भाषा से ही नहीं भारत के समाज से और उसकी जीवन यात्रा से और हमारे लोकतंत्र की उपलब्धि से भी जुड़े हुए हैं । वह समर्थ हो सके इसके लिए जरूरी है कि हर स्तर पर उसका समुचित उपयोग हो । वह एक पीढी से दूसरे तक पहुंचे, ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढे, हमारे विभिन्न कार्यों का माध्यम बने, विभिन्न कार्यों के लिए उसका दस्तावेजीकरण हो, और उसे राजकीय समर्थन भी प्राप्त हो । वास्तविकता यही है कि जिस हिन्दी भाषा को आज पचास करोड़ लोग मातृ भाषा के रूप में उपयोग करते हैं उसकी व्यावहारिक जीवन के तमाम क्षेत्रों में उपयोग असंतोषजनक है ।

आजादी पाने के बाद वह सब न हो सका जो होना चाहिए था। लगभग सात दशकों से हिन्दी भाषा को इंतजार है कि उसे व्यावहारिक स्तर पर पूर्ण राजभाषा का दर्जा दे दिया जाय और देश में स्वदेशी भाषा जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में संचार और संवाद का माध्यम बने । संविधान ने अनुच्छेद 350 और 351 के तहत भारत संघ की राज भाषा का दर्जा विधिक रूप से दिया है । संविधान में हिन्दी के लिए दृढसंकल्प के उल्लेख के बावजूद और हिन्दी सेवी तमाम सरकारी संस्थानों और उपक्रमों के बावजूद हिन्दी को लेकर हम ज्यादा आगे नहीं बढ़ सके हैं । आज की स्थिति यह है कि वास्तव में शिक्षित माने अंग्रेजी दां होना ही है । सिर्फ हिन्दी जानना अनपढ़तुल्य ही माना जाता है । हिन्दी के ज्ञान पर कोई गर्व नहीं होता है पर अंग्रेजी की दासता और सम्मोहन अटूट है । अंग्रेजी सुधारने के विज्ञापन ब्रिटेन ही नहीं भारत के तमाम संस्थाएं कर रही हैं और खूब चल भी रही हैं । हिन्दी क्षेत्र समेत अनेक प्रांतीय सरकारें अंग्रेजी स्कूल खोलने के लिए कटिबद्ध हैं । भाषाई साम्राज्यवाद का यह जबर्दस्त उदाहरण है । ज्ञान के क्षेत्र में जातिवाद है और अंग्रेजी उच्च जाति की श्रेणी में है और हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाएं अस्पृश्य बनी हुई हैं। उनके लिए या तो पूरी निषेधाज्ञा है या फिर 'विना अनुमति के प्रवेश वर्जित है' की तख्ती टंगी हुई है । इस करुण दृश्य को पचाना कठिन है क्योंकि वह सभ्यता के आगामे विकट संकट को प्रस्तुत कर रहा है । आज बाजार का युग है और जिसकी मांग है वही बचेगा। मांग अंग्रेजी की ही बनी हुई है । यह विचारणीय है कि बीसवीं सदी के शुरुआती दौर में राजा राम मोहन राय, केशव चंद्र सेन, दयानंद सरस्वती, बंकिम चंद्र चटर्जी, भूदेव मुखर्जी जैसे शुद्ध अहिन्दीभाषी लोगों ने हिन्दी को राष्ट्रीय संवाद का माध्यम बनाने की जोरदार वकालत की थी । राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने 1936 में वर्धा में 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' की स्थापना की जिसमें राजेंद्र प्रसाद, राजगोपालाचारी, जवाहर लाल नेहरू, सुभाष चंद्र बोस, जमना लाल बजाज, बाबा राघव दास, माखन लाल चतुर्वेदी और वियोगी हरि जैसे लोग शामिल थे । उन्होंने अपने पुत्र देवदास गांधी को दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार समिति का काम सौंपा । यह सब हिन्दी के प्रति राष्ट्रीय भावना और समाज और संस्कृति के उत्थान के प्रति समर्पण को बताता है । 'हिंद स्वराज' में गांधी जी स्पष्ट कहते हैं कि 'हिंदुस्तान की राष्ट्रभाषा हिन्दी ही होनी चाहिए' । इसके पक्ष में वह कारण भी गिनाते हैं कि राष्ट्रभाषा वह भाषा हो जो सीखने में आसान हो, सबके लिए काम-काज कर पाने संभावना हो, सारे देश के लिए जिसे सीखना सरल हो, अधिकांश लोगों की भाषा हो । विचार कर वह हिन्दी को सही पाते हैं और अंग्रेजी को इसके लिए उपयुक्त नहीं पाते हैं । उनके विचार में अंग्रेजी हमारी राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती । वह अंग्रेजी मोह को स्वराज्य के लिए घातक बताते हैं । उनके विचार में 'अंग्रेजी की शिक्षा गुलामी में ढलने जैसा है' । वे तो यहां तक कहते हैं कि 'हिंदुस्तान को गुलाम बनाने वाले तो हम अंग्रेजी जानने वाले लोग ही हैं । राष्ट्र की हाय अंग्रेजों पर नहीं पड़ेगी हम पर पड़ेगी' । वे अंग्रेजी से मुक्ति को स्वराज्य की लड़ाई का एक हिस्सा मानते थे । वे मानते हैं कि सभी हिंदुस्तानियों को हिन्दी का ज्ञान होना चाहिए । उनकी हिन्दी व्यापक है और उसे नागरी या फारसी में लिखा जाता है। पर देव नागरी लिपि को वह सही ठहराते हैं । गांधी

जी मानते हैं कि हिन्दी का फैलाव ज्यादा है । वह मीठी, नम्र और ओजस्वी भाषा है । वे अपना अनुभव साझा करते हुए कहते हैं कि 'मद्रास हो या मुम्बई भारत में मुझे हर जगह हिन्दुस्तानी बोलने वाले मिल गए' । हर तबके के लोग यहां तक कि मजदूर, साधु, सन्यासी सभी हिन्दी का उपयोग करते हैं । अत: हिन्दी ही शिक्षित समुदाय की सामान्य भाषा हो सकती है । उसे आसानी से सीखा जा सकता है। यंग इंडिया में वह लिखते हैं कि यह बात शायद ही कोई मानता हो कि दक्षिण अफ्रीका में रहने वाले सभी तमिल-तेलुगु भाषी लोग हिन्दी में खूब अच्छी तरह बातचीत कर सकते हैं । वे अंग्रेजी के प्रश्रय को 'गुलामी और घोर पतन का चिह्न' कहते हैं । काशी हिंदू विश्वविद्यालय में बोलते हुए गांधी जी ने कहा था :'जरा सोच कर देखिए कि अंग्रेजी भाषा में अंग्रेज बच्चों के साथ होड़ करने में हमारे बच्चों को कितना वजन पड़ता है । पूना के कुछ प्रोफेसरों से मेरी बात हुई, उन्होंने बताया कि चूंकि हम भारतीय विद्यार्थी को अंग्रेजी के मार्फत ज्ञान संपादित करना पड़ता है, इसलिए उसे अपने बेशकीमती वर्षों में से कम से कम छह वर्ष अधिक जाना पड़ता, श्रम और संसाधन का घोर अपव्यय होता है ।

सन् 1946 में 'हरिजन' में गांधी जी लिखते हैं कि 'यह हमारी मानसिक दासता है कि हम समझते हैं कि अंग्रेजी के बिना हमारा काम नहीं चल सकता । मैं इस पराजय की भावना वाले विचार को कभी स्वीकार नहीं कर सकता' । आज वैश्विक ज्ञान के बाजार में हम हाशिए पर हैं और शिक्षा में सृजनात्मकता का बेहद अभाव बना हुआ है । अपनी भाषा और संस्कृति को खोते हुए हम वैचारिक गुलामी की ओर ही बढते हैं । हिन्दी साहित्य सम्मेलन इंदौर के मार्च 1918 के अधिवेशन में बोलते हुए गांधी जी ने दो टूक शब्दों में आहवान किया था : 'पहली माता (अंग्रेजी) से हमें जो दूध मिल रहा है, उसमें जहर और पानी मिला हुआ है, और दूसरी माता (मातृभाषा) से शुद्ध दूध मिल सकता है । बिना इस शुद्ध दूध के मिले हमारी उन्नति होना असंभव है पर जो अंधा है, वह देख नहीं सकता । गुलाम यह नहीं जानता कि अपनी बेडियां किस तरह तोड़े । पचास वर्षों से हम अंग्रेजी के मोह में फंसे हैं । हमारी प्रज्ञा अज्ञान में डूबी रहती है । आप हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनने का गौरव प्रदान करें, हिन्दी सब समझते हैं । इसे राष्ट्रभाषा बना कर हमें अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए'। स्वतंत्रता मिलने के बाद भी हिन्दी के साथ हीलाहवाली करते हुए हम अंग्रेजी को ही तरजीह देते रहे । ऐसा शिक्षित वर्ग तैयार करते रहे जिसका शेष देशवासियों से सम्पर्क ही घटता गया और जिसका संस्कृति का स्वाद देश से परे वैश्विक होने लगा । हम मैकाले के तिरस्कार से भी कुछ कदम आगे ही बढ गए । देशी भाषा और संस्कृति का अनादर जारी है । गांधी जी के शब्दों में 'भाषा माता के समान है । माता पर हमारा जो प्रेम होना चाहिए वह हममें नहीं है' । मातृभाषा से मातृवत स्नेह से साहित्य, शिक्षा, संस्कृति, कला और नागरिक जीवन सभी कुछ गहनता और गहराई से जुड़ा होता है । इस वर्ष महात्मा गांधी का विशेष स्मरण किया जा रहा है । उनके भाषाई सपने पर भी सरकार और समाज सबको विचार करना चाहिए । अब जब नई शिक्षानीति को अंजाम दिया जा रहा है यह आवश्यक होगा कि देश को उसकी भाषा में शिक्षा दी जाय ।

हिमालय की पुरातन लिपि टांकरी

कश्मीर से नेपाल तक के भू-भाग में कभी टांकरी लिपि का प्रचलन था। इसी में वहाँ की भाषा-बोलियों को लिखा जाता था। यह हिमालयी क्षेत्र के ब्राह्मणों की पूजा की भाषा भी रही है। लेकिन क्रूर मुगलों और अंग्रेजों की नीतियों के कारण यह लिपि अब प्रचलन से लगभग बाहर हो गई है।

अधिकतर पहाड़ी भाषायें टांकरी लिपि में ही लिखी गई हैं । टांकरी लिपि शारदा लिपि से निकली है और यह गुरमुखी लिपि से भी सम्बन्धित है । आज भी पुराने राजस्व रिकॉर्ड, पुराने मंदिर की घंटियों या पुराने किसी बर्तन में टांकरी में लिखे शब्द देखे जा सकते हैं। टांकरी लिपि ब्राह्मी परिवार की लिपियों का ही हिस्सा है जो कि कश्मीरी में प्रयोग होने वाली शारदा लिपि से निकली है। जम्मू कश्मीर की डोगरी, हिमाचल प्रदेश की चम्बियाली, कुल्लुवी और उत्तराखण्ड की गढ़वाली समेत कई भाषाएँ टांकरी में लिखी जाती थी। नेपाल में भी इस लिपि के प्रयोग के सबूत मिले हैं।

माना जाता है कि कौलान्तक पीठ की अनेक लिपियों का प्रयोग विशेष साधनाओं को गोपनीय रखने के लिए होता है। इनमें से कुछ भाषाएँ और लिपियाँ साधकों को अनिवार्य रूप से सिखाई जाती रही हैं। टांकरी लिपि भी इनमें शामिल है। यह भी माना जाता है कि इसको बिना जाने कोई 'कौल साधक' नहीं हो सकता।

इस प्राचीन लिपि टांकरी पर लंबे समय से चले शोध के बाद यह खुलासा हुआ है कि टांकरी लिपि का दमन मुगलों व अंग्रेजों ने किया था। मुगलों ने यहाँ पर उर्दू भाषा को तरजीह दी और अंग्रेजों ने भी उर्दू भाषा पढ़ने वाले लोगों को ही अपने शासन में नौकरी दी। जिस कारण अध्यात्मिक एवं मंत्रोच्चारण में प्रयोग होने वाली टांकरी भाषा का धीरे-धीरे पतन हुआ लेकिन पारम्परिक एवं वांशिकी तौर पर कुछ घरों में पुश्तैनी तौर पर टांकरी पढ़ने की परम्परा रही।

उत्तराखण्ड के जौनसार क्षेत्र के मूल निवासी व भारतीय सूचना सेवा के अफसर रमेश जोशी इस लिपि में जौनसारी को लिखने का सफल प्रयोग कर चुके हैं।

तटबंधों को तोड़ती हिन्दी

अरविन्द जयतिलक

एक भाषा के तौर पर हिन्दी का जितना अंतर्राष्ट्रीय विकास हुआ है, विश्व में शायद ही किसी अन्य भाषा का फैलाव हुआ हो। वे सभी संस्थाएं, सरकारी मशीनरी और छोटे-बड़े समूह बधाई के पात्र हैं जिन्होंने हिन्दी को नया मुकाम प्रदान किया। यूजर्स के लिहाज से 1952 में हिन्दी विश्व में पांचवे स्थान पर थी । लेकिन 1980 के दशक में चीनी और अंग्रेजी भाषा के बाद तीसरे स्थान पर पहुंच गयी। आज उसकी लोकप्रियता दुनिया के सिर चढ़कर बोल रही है । आज हिन्दी अंग्रेजी भाषा की तरह विश्वसंवाद का एक सशक्त भाषा के तौर पर उभर रही है और विश्व समुदाय उसका स्वागत कर रहा है। कभी भारतीय ग्रंथों विशेष रुप से संस्कृत भाषा की गंभीरता और उसकी उपादेयता और संस्कृत कवियों व साहित्कारों की साहित्यिक रचना का मीमांसा करने वाला यूरोपिय देश जर्मनी संस्कृत भाषा को लेकर आत्ममुग्ध हुआ करता था । वेदों, पुराणों और उपनिषदों को जर्मन भाषा में अनुदित कर साहित्य के प्रति अपने अनुराग को संदर्भित करता था ।

आज वह संस्कृत की तरह हिन्दी को भी उतना ही महत्व दे रहा है । जर्मन के लोग हिन्दी को एशियाई आबादी के एक बड़े तबके से संपर्क साधने का सबसे दमदार हथियार मानने लगे हैं । जर्मनी के हाईडेलबर्ग, लोअर सेक्सोनी के लाइपजिंग, बर्लिन के हम्बोलडिट और बॉन विश्वविद्यालय के अलावा दुनिया के कई शिक्षण संस्थाओं में अब हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम में शामिल कर ली गई हैं । आज दुनिया के 40 से अधिक देशों के 600 से अधिक विश्वविद्यालयों और स्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई हो रही है । दुनिया के सबसे ताकतवर देश अमेरिका में हिन्दी की धूम मची है । यहां 30 से अधिक विश्वविद्यालयों में भाषायी पाठ्यक्रम में हिन्दी को महत्वपूर्ण दर्जा हासिल है । यही नहीं पिछले दिनों 'लैंग्वेज यूज इन यूनाइटेड स्टेट्स-2011' की हालिया रिपोर्ट से भी उद्घाटित हुआ कि अमेरिका में बोली जाने वाली टॉप दस भाषाओं में हिन्दी भी है और इसे बोलने वालों की संख्या 6.5 लाख से ऊपर है । अमेरिकी कम्युनिटी सर्वे की रिपोर्ट बताती है अमेरिका में हिन्दी 105 फीसद की रफ्तार से आगे बढ़ रही है । गौरतलब है कि 1815 से ही येन विश्वविद्यालय में हिन्दी को पाठ्यक्रम के तौर पर स्वीकारा गया है । अमेरिका में 1875 में ही कैलाग ने हिन्दी भाषा का व्याकरण तैयार किया । अमेरिका के अलावा यूरोपिय देशों में भी हिन्दी का तेजी से विकास हो रहा है । इंग्लैण्ड के लंदन, कैम्ब्रिज और यार्क विश्वविद्यालयों में हिन्दी को चाहने वालों की तादाद लगातार बढ़ रही है ।

पहले से कहीं ज्यादा पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। छात्र समुदाय इस भाषा में रोजगार की व्यापक संभावनाएं भी तलाशने लगा है । एक दशक से रुस के कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी साहित्य पर शोध हो रहे हैं । यहां हिन्दी का बोलबाला बढ़ा है । अनेक रुसी विद्वानों ने हिन्दी साहित्य का अनुवाद किया है । इनमें से एक तुलसीकृत रामचरित मानस भी है जिसका अनुवाद प्रसिद्ध विद्वान वारान्निकोव द्वारा किया गया है । यह तथ्य है कि रुस में हिन्दी ग्रंथों का जितना अनुवाद हुआ है उतना विश्व में किसी भी भाषा का नहीं हुआ है । एशियाई देश जापान में भी हिन्दी भाषा का बहुत अधिक सम्मान है । मजेदार बात यह कि अब जापान की यात्रा पर जाने वाले भारतीय राजनेता जापान में हिन्दी भाषा में अपने विचार व्यक्त करते हैं । गत वर्ष जापान यात्रा पर गए भारतीय प्रधानमंत्री ने भी अपने विचार हिन्दी में व्यक्त किए और उससे न सिर्फ जापान बल्कि विश्व बिरादरी भी प्रभावित दिखी । जापान की दो नेशनल यूनिवर्सिटी ओसाका और टोकियो में स्नातक और परास्नातक स्तर पर हिन्दी की पढ़ाई की व्यवस्था है । प्रोफेसर दोई ने टोकियो विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग की स्थापना की है । रुस की तरह जापान में भी हिन्दी साहित्य का अनुवाद हुआ है । प्रोफेसर तोबियोतनाका ने भीष्म साहनी के उपन्यास तमस का जापानी में अनुवाद किया है । प्रोफेसर कोगा ने 'जापानी-हिन्दी कोष' की रचना की है । उन्होंने गांधी जी की आत्मकथा का भी जापानी में अनुवाद किया है । प्रोफेसर मोजोकामी हर वर्ष हिन्दी का एक नाटक तैयार करते हैं और उसका मंचन भारत में करते हैं । महात्मा गांधी और टैगोर के अनन्य भक्तों में से एक साइजी माकिनो जब भारत आए तो हिन्दी के रंग में रंग गए । उन्होंने गांधी जी के सेवाग्राम में रहकर हिन्दी सीखी । गौर करने वाली बात यह कि जापान और भारत का लोक साहित्य समान है । मणिपुर और राजस्थान की लोककथाएं जापान की लोककथाओं जैसी है । गुयाना और मॉरिशस में भी भारतीय मूल के लोगों की संख्या सर्वाधिक है । यहां प्राथमिक स्तर से लेकर स्नातक स्तर पर हिन्दी के पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था है । मॉरिशस में अंग्रेजी राजभाषा है । फ्रेंच बोलने वालों की तादात अच्छी है । लेकिन हिन्दी की लोकप्रियता में कमी नहीं है । यहां बहुत पहले ही हिन्दी सचिवालय की स्थापना हो चुकी है और ढेरों हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है । इसी तरह फिजी, नेपाल, भूटान, मालदीव और श्रीलंका में भी हिन्दी का जलवा कायम है । विगत वर्षों में खाड़ी देशों में हिन्दी का तेजी से प्रचार-प्रसार हुआ है । वहां के

सोशल मीडिया में हिन्दी का दखल बढ़ा है और कई पत्र-पत्रिकाओं को ऑनलाइन पढ़ा जा रहा है ।

संयुक्त अरब अमीरात में हिन्दी एफएम चैनल लोगों का मनोरंजन कर रहे हैं । नए-पुराने हिन्दी गीतों को चाव से सुना जा रहा है । जर्मन के लोग भी हिन्दी को एशियाई आबादी के एक बड़े तबके से संपर्क साधने का सबसे बड़ा हथियार मानते हैं । एक आंकडें के मुताबिक दुनिया भर के 150 विश्वविद्यालयों और कई छोटे-बड़े शिक्षण संस्थाओं में रिसर्च स्तर तक अध्ययन-अध्यापन की पूरी व्यवस्था की गयी है । यूरोप से ही तकरीबन दो दर्जन पत्र-पत्रिकाएं हिन्दी में प्रकाशित हो रही हैं । सुखद यह है कि पाठकों की संख्या भी लगातार बढ़ रही है । एक सर्वेक्षण के मुताबिक आज विश्व में आधा अरब लोग हिन्दी बोलते है और तकरीबन एक अरब लोग हिन्दी बखूबी समझते हैं । वेब, विज्ञापन, संगीत, सिनेमा और बाजार ऐसा कोई क्षेत्र नहीं बचा है जहां हिन्दी अपना पांव पसारती न दिख रही हो । दुनिया के अधिकांश देशों में हिन्दी फिल्मों ने धूम मचा रखी है। बॉलीवुड स्टार अपनी फिल्मों के प्रचार-प्रसार के लिए अकसर इन देशों में शो आयोजित करते रहते हैं । पिछले कुछ वर्षों से दुबई में लगातार हिन्दी कार्यक्रमों का आयोजन हो रहा है जो अपने-आप में एक बड़ी उपलब्धि है । हिन्दी भाषा की यह असाधारण उपलब्धि कही जाएगी कि जिन देशों में भाषा को विचारों की पोषाक और राष्ट्र का जीवन समझा जाता है वहां भी हिन्दी तेजी से अपना पांव पसार रही है ।

गौरतलब है कि हंगरी, बुल्गारिया, रोमानिया, स्विटजरलैंड, स्वीडन, फ्रांस, नार्वे, जापान, इटली, मिस्र, कजाकिस्तान, तुर्केमेनिस्तान, कतर और अफगानिस्तान, रुस और जर्मनी अपनी भाषा को लेकर बेहद संवेदनशील हैं। वे इसे अपनी सांस्कृतिक अस्मिता से जोड़कर देखते हैं । वैश्वीकरण के माहौल में अब हिन्दी विदेशी कंपनियों के लिए भी लाभ का एक आकर्षक भाषा व जरिया बनने लगी है । वे अपने उत्पादों को बड़ी आबादी तक पहुंचाने के लिए हिन्दी को माध्यम बना रहे हैं । कह सकते हैं कि आज पूरा कॉर्पोरेट कल्चर ही हिन्दीमय होता जा रहा है । हिन्दी के बढ़ते दायरे से उत्साहित होकर सरकार की संस्थाएं भी जो कभी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में खानापूर्ति करती थी वह आज तल्लीनता से हिन्दी दिवस, हिन्दी सप्ताह और हिन्दी पखवाड़ा मना रही हैं । हिन्दी के प्रचार-प्रसार को लेकर अब शोक जताने, छाती पीटने और बेवजह आंसू टपकाने की जरुरत नहीं है । कहना गलत नहीं होगा कि जिस तरह अंग्रेजी भाषा अपनी शानदार संवाद और व्यापारिक नजरिए के कारण अपना विश्वव्यापी चरित्र गढ़ने-बुनने में सफल रही, ठीक उसी तरह हिन्दी भाषा भी अपना परचम लहरा रही है । सच कहें तो हिन्दी अपने दायरे से बाहर निकल विश्वजगत को अचंभित और प्रभावित कर रही है और हिन्दी भाषा के विकास और उसके फैलाव की दृष्टि से यह शुभ संकेत है ।

-अरविन्द जयतिलक
हाउस नंबर-195, सेक्टर-4, जानकीपुरम विस्तार
लखनऊ-226031 (उ.प्र.)

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की ओर से
आपको एवं आपके परिवार को
नव वर्ष की
हार्दिक शुभकामनाएँ...
आइए... इस नव वर्ष में प्रण लें कि हम भारतीय भाषाओं के
संरक्षण व संवर्धन में अपना असीम योगदान देकर एक मजबूत राष्ट्र का निर्माण करेंगे।
पत्तों पर पानी डालने से नहीं, जड़ों को सींचने से बढ़ेगी हिन्दी।

डोगरी लोक गीतों में पर्यावरण चेतना

यशपाल निर्मल

पर्यावरण शब्द का निर्माण दो शब्दों परि और आवरण के मेल से हुआ है। परि का अर्थ है चारों ओर और आवरण का अर्थ है ढका हुआ। इस प्रकार पर्यावरण शब्द का अर्थ है चारों तरफ से ढकने वाला। अंग्रेजी भाषा में पर्यावरण के लिए Environment शब्द प्रचलित है। जिसकी उत्पति फ्रेंच भाषा के शब्द Environir से मानी जाती है। पर्यावरण की अवधारणा भारत के लिए नई नहीं है। हमारी परंपरा में जिसे प्रकृति कहा जाता है, वर्तमान समय में उसे पर्यावण के रूप में समझा जाता है । पर्यावरण का अर्थ है हमारा बाहरी वातावरण, जिसने हमें चारों ओर से घेर रखा हो। पर्यावरण प्राणी जगत को प्रभावित करता है और उसकी क्रियाओं से स्वयं भी प्रभावित होता है। पर्यावरण के अंतर्गत जीव-जंतु, वनस्पति, हवा, पानी, नदी, पहाड़, प्रकाश, मिट्टी, ताप आदि तत्वों का समावेश है। वस्तुतः पर्यावरण में वह सब कुछ परिगणित है जो इस पृथ्वी पर व्यक्त या अव्यक्त रूप में विद्यमान है। पर्यावरण को परिभाषित करते हुए इन्टरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया आफ सोशल साइंसेज में कहा गया है कि, ''पर्यावरण को जीवन और जीव के विकास को प्रभावित करने वाली सभी बाहरी दशाओं और प्रभावों की समग्रता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।'' प्राणी जगत का इस पर्यावरण के साथ गहरा नाता है। हम इसी में जन्म लेते हैं, पलते बढ़ते हैं, सांस लेते हैं। हमारे स्वास्थ्य पर पर्यावरण का सीधा प्रभाव पड़ता है । मौजूदा उद्योगीकरण के युग में प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित और अंधा धुंध दोहन और रोशन के कारण पर्यावरण पर बड़ा गंभीर संकट पैदा हो गया है। विकास की अन्धी दौड़ में भागते मनुष्य के पास इस विषय पर सोचने के लिए समय ही नहीं है। अनियंत्रित भौतिकता के कारण संपन्नता दी ऐसी होड़ लगी हुई है, जिस कारण पर्यावरण रोज-रोज बिगड़ रहा है। प्रकृति के साथ ऐसी अनियंत्रित छेड़छाड़ पहले नहीं होती थी। आज का मानव जिस प्रकार से पर्यावरण के सम्पूर्ण नाश पर तुला हुआ है, इस प्रकार की प्रवृति पहले नहीं थी। वैदिक ऋषि पर्यावरण के अधारभूत तत्वों के जानकार थे। ऋग्वेद से पहले का आर्यवर्त प्रकृति की शक्तियों का खोजी था। ऋग्वेद के दशम् मंडल में धरती की रक्षा के लिए हवा और पानी के साथ औषधियों, नदी, जंगल, पहाड़ की सुरक्षा का आह्वान है। यजुर्वेद में, ''हे पृथ्वी समुद्र तेरा वध नहीं करे'' कह कर पर्यावरण प्रदूषण की सुनामी जैसी आपदाओं से बचने की प्रार्थना है। जल संरक्षण, नदी प्रार्थना और वन संरक्षण ऋग्वेद में भरा पड़ा है। अथर्ववेद ''माता भूमिः पुत्रे अहम् पृथिव्याः'' कह कर पृथ्वी को मां के समान पूजने योग्य बताया गया है और संतान का मां के प्रति दायित्व को समझाने का प्रयास किया गया है। पर्यावरण प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण है जंगलों का लगातार घटते जाना, जबकि वृक्ष मनुष्य और जगत के लिए प्रकृति का सबसे श्रेष्ठ वरदान हैं। वेदों में वृक्षों के महत्व को स्वीकार करते हुए उनको न सिर्फ पूजने योग्य माना हुआ है बल्कि उनके अंग-प्रत्यंग में देवताओं का वास माना गया है और वृक्षों को काटना पाप माना गया है।

मूले ब्रह्मा त्वचि विष्णु पत्रणि सर्वदेवानां वृक्ष रेवं नमोतुते

कह कर वृक्ष के मूल में ब्रह्मा त्वचा में विष्णु और पत्तों में सभी देवताओं के निवास को स्वीकार किया गया है। मत्स्य पुराण में एक वृक्ष को दस पुत्रों के समान बताया गया है:-

दश कूप सम वापी, दश वापी समोह्रदः।

दश ह्रत्दः समः पुत्रे, दश पुत्रे समो द्रुमः॥

जहां तक लोक साहित्य की बात है उस में शुरु से ही अपने वातावरण के प्रति सजग, जागरुक रहने की चेतना नजर आती है। वेदों, उपनिषदों के चिंतन से लेकर प्राचीन गुरुकुल परंपरा में भी यह चेतना देखी जा सकती है। जिस में भौतिक वातावरण से दूर, नगरीय सभ्यता के छल-छिद्दर रहित स्वच्छ, निर्मल वातावरण में भविष्य का निर्माण किया जाता था। जल, वायु, मिट्टी प्रदूषण मानुष्य के अस्तित्व के लिए खतरनाक है, इस सच्चाई से उनका परिचय करवाया जाता था। भारतीय चिंतन परंपरा में शुरु से ही ''सह अस्तित्व'' की अवधारणा देखने को मिलती है। जिसमें वृक्षों, नदियों, पक्षियों, सर्पों, पशुओं सभी में ईश्वर की सत्ता को स्वीकार किया गया है और इस कारण दृश्यात्मक जगत का कोई रूप उपेक्षनीय नहीं है। इसी क्रम में किसी कामना की पूर्ति के लिए वृक्षों को पानी देने की परंपरा बी नजर आती है। पिप्पल, बड़, तुलसी, नीम, केला, बैर आदि वृक्षों को पानी देकर शायद ही किसी कामना की पूर्ति भी होती हो, परंतु पर्यावरण को लाभ अवश्य होता है। वस्तुतः प्रकृति के साथ जीना, उसको अपना सहयोगी बनाना यह चेतना हमारे जीवन में भी है और डोगरी लोक साहित्य में भी उसकी अभिव्यक्ति विषद रूप में हुई है। डोगरी लोक गीतों में पर्यावरण चेतना का चित्रण लोक गीतकारों ने बड़े ही कलात्मक ढंग से किया हुआ है। कहते हैं जल ही जीवन है। जल अर्थात् पानी के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। जल संरक्षण की भावना को मद्देनजर रखते हुए डोगरी लोक गीतकारों ने जल को देवता माना और नदियों को देवियों का दर्जा देकर वर्णन किया।

हाड़ म्हीनै सुद्ध आई ऐ, पुन्नेआ दा धयाड़ा,
अज्ज न्हौगे गौरी कुंड कल्ल न्हौगे नाड़ा,
मार छालीं देवका ते पाप टलेआ सारा।

अग्नि को भी डोगरी लोक साहित्य और खासतौर पर डोगरी लोक गीतों में देवता के तौर पर चित्रित किया गया है। अग्नि कई प्रकार के किटाणुओं का नाश करती है। वातावरण को शुद्ध रखती है। यही कारण है कि हमारे वेद शास्त्रों में अग्नि को देवता का दर्जा दिया गया है और शुभ कार्यों में बग्नि को साक्षी माना जाता है। उदाहरण के तौर पर एक डोगरी लोक गीत की यह पंक्तियां देखे:-

काह्नां अग्ग बलै घ्यो साड़ियै,
कुसै बाबल दी कन्या ब्याहियै, कुसै धार्मी दी कन्या ब्याहियै,
काह्नां अग्ग बलै घ्यो साड़ियै

डोगरी लोक गीतों में सूर्य, चांद, हवा आदि को भी देवताओं के रूप में चित्रित किया गया है। सूर्य हमें रोशनी देता है, गर्मी देता है। इस से हमें जीवन शक्ति मिलती है। डोगरा जनमानस के दिन की शुरूआत स्नान, पूजा पाठ और तुलसी, पीपल और सूर्य को पानी देकर होती है। डुग्गर में सूर्य को जल देने का विशेष महत्व है:-

मेरी मां सुहागन होग, सुहागन दे घर गीगा होग, ओह् बी दिंदी सूरज पानी, लै बे सूरजा ठंडड़ा पानी।

पशु पक्षी भी पर्यावरण का हिस्सा हैं। डोगरी जनमानस ने पशु पक्षियों को भी देवताओ की संज्ञा देकर लोगों में पशु पक्षियों के प्रति प्रेम, दया और सम्मान की भावना को बल दिया है। डुग्गर लोक कोओं, मछलियों, भैंसे, बकरी आदि की भी पूजा करते हैं। डुग्गर के लोग गाय के लिए अपने प्राण तक न्यौछावर कर देते हैं और गाय को डुग्गर में मां का दर्जा प्राप्त है। एक लोक गीत का उदाहरण देखें:-

गवे नीं गवे तूं साढ़ी धार्मैं की माई।
गोरा गोरा बच्छा साढ़ा धार्मैं दा भाई।।

डुग्गर लोक साहित्य में वृक्षों को भी देवता मान कर पूजा जाता है। बेर, पीपल, तुलसी, केला, आंवला आदि वृक्षों की पूजा का वर्णन डोगरी लोक गीतों में मिलता है। इन वृक्षों के महत्व को देखते हुए इनको देवता मान कर पूजने के पीछे डुग्गर जनमानस की भावना यही रही होगी कि इनका संरक्षण किया जाए। इनको कटने से बचाया जा सके। तुलसी पूजा के महत्व को दर्शाता यह डोगरी लोक गीत देखें:-

आया भाद्रों निं कोई आया जे होई रात न्हेरखड़ी।
जि'नें सखियें तुलसी पूजी उ'नें ते जाना तरी।।

डुग्गर में पीपल को काटना महापाप माना जाता है। काटना तो दूर उसकी सूखी लकड़ी को जलाना भी पाप समझा जाता है। पीपल के पेड़ को पानी देने का विशेष महत्व है। उसे ब्रह्मा का रूप माना जाता है। घर के किसी सदस्य की मृत्यु हो जाने पर वर्ष भर पीपल के पेड़ को जल देने का विधान है। डुग्गर जन मानस कीड़े मकोड़ों, सर्पों और बिच्छुओं तक की भी पूजा करता है। नाग पूजा की एक समृद्ध परंपरा रही है डुग्गर में। नाग पंचमी कू अवसर पर डुग्गर के घर-घर में नाग पूजा होती है। नागों को कच्ची लस्सी से स्नान कराया जाता है। उनको कच्ची लस्सी पिलाई जाती है। नाग पूजा से संबधित गीतों की भी डुग्गर में भरमार है। एक लोक गीत देखें:-

साढ़ै बावे सुरगल गी पूजदे बरमियें दूध लस्सी पाई जी।
साढ़ै नाग पैंचमी गी पूजदे सारे नागें गी लैन मनाई जी।।

इस प्रकार हम देखते हैं कि डोगरी लोक गीतों में प्रकृति को पूजा के साथ जोड़ कर पर्यावरण संरक्षण का महान उद्देश्य प्राप्त किया गया है। यह इस बात की ओर इशारा करता है कि डुग्गर जनमानस शुरूआती काल से ही अपने पर्यावरण के प्रति सचेत रहा है और डोगरी लोक साहित्य, विशेषत: डोगरी लोक गीतों में पर्यावरण चेतना प्रचुर मात्र में देखने को मिलती है।

यशपाल निर्मल
मार्फत सीता राम शर्मा
524-माता रानी दरबार, नरवाल पाई, सतवारी,
एयर पोर्ट रोड, जम्मू-180003

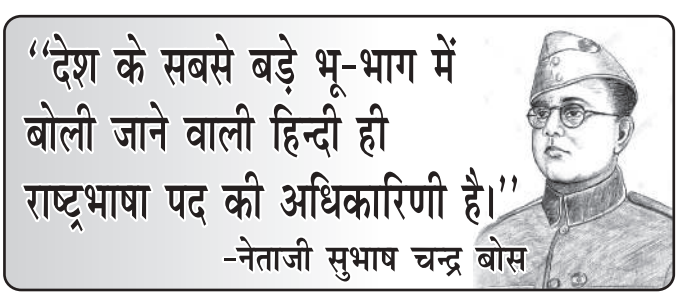

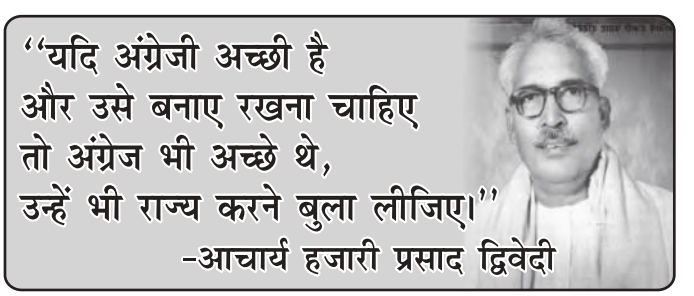

विज्ञापन, सोशल मीडिया और हिन्दी

आभा पालीवाल

यह कहना गलत नहीं होगा कि विज्ञापन जनसंचार का एक सशक्त माध्यम है । आज के युग में विज्ञापनों का महत्त्व स्वयंसिद्ध है। आजकल बहुत सी चीजों का इस्तेमाल विज्ञापनों को देखकर किया जाता है । नमक जैसी इस्तेमाल की वस्तु भी विज्ञापन से अछूती नहीं है । भारत दुनियाभर के उत्पाद निर्माताओं के लिए एक बड़ा खरीददार और उपभोक्ता बाजार है । मेरे अपने विचार से संचार माध्यमों का केंद्रीय महत्त्व है क्योंकि वे ही किसी भी उत्पाद को खरीदने के लिए उपभोक्ता के मन में ललक पैदा करते हैं । यह उत्पाद वस्तु से लेकर विचार तक कुछ भी हो सकता है । कह सकते हैं कि विज्ञापनों का सकारात्मक उपयोग किया जाये तो कोई शक नहीं कि निश्चित रूप से हमें आशातीत परिणाम देखने को मिलेंगे ।

आज भूमंडलीकरण की भाषा का प्रसार हो रहा है तथा बोलियाँ सिकुड़ और मर रही हैं । आज के भाषा संकट को इस रूप में देखा जा रहा है कि भारतीय भाषाओं के समक्ष उच्चरित रूप भर बनकर रह जाने का खतरा उपस्थित है । आधुनिक माध्यम टी.वी. अपने विज्ञापनों से लेकर कई अतिशय लोकप्रिय कार्यक्रमों तक में हिन्दी में बोलता भर है, लिखता अंग्रेजी में ही है । इसके बावजूद यह सच है कि इसी माध्यम के सहारे हिन्दी अखिल भारतीय ही नहीं बल्कि वैश्विक विस्तार के नए आयाम छू रही है । विज्ञापनों की भाषा व अन्य कार्यक्रमों की भाषा के रूप में सामने आने वाली हिन्दी शुद्धतावादियों को भले ही न पच रही हो परंतु युवा वर्ग ने उसे देश भर में अपनी सक्रिय भाषा कोष में शामिल कर लिया है । इसे हिन्दी के संदर्भ में संचार माध्यम की बड़ी देन कहा जा सकता है । लोकतंत्र में मीडिया की भूमिका काफी अहम मानी जाती है । मीडिया, संचार माध्यम यदि आज के आदमी को पूरी दुनिया से जोड़ते हैं तो वे ऐसा भाषा के द्वारा ही करते हैं, इससे हिन्दी भाषा के सामर्थ्य में विकास हुआ है । अत: संचार माध्यम की भाषा के रूप में प्रयुक्त होने पर हिन्दी समस्त ज्ञान-विज्ञान और आधुनिक विषयों से सहज ही जुड़ गयी है । आज व्यवहार क्षेत्र की व्यापकता के कारण संचार माध्यमों के सहारे हिन्दी भाषा की संप्रेषण क्षमता का बहुमुखी विकास हो रहा है । हम देख सकते हैं कि केवल राष्ट्रीय ही नहीं, विविध अंतर्राष्ट्रीय चैनलों में हिन्दी आज सब प्रकार के आधुनिक संदर्भों को व्यक्त करने के अपने सामर्थ्य को विश्व के समक्ष प्रमाणित कर रही है । अत: कहा जा सकता है कि वैश्विक संदर्भ में हिन्दी की वास्तविक शक्ति को उभारने में संचार माध्यमों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । चूँकि हम मानते हैं कि अब तकनीक-संचार के साधनों की तीव्रता ने दुनिया के मीडिया को बहुत बदल दिया है । आज भी हिन्दी के प्रति उभरते दोहरी मानसिकता के परिवेश को देखा जा सकता है परंतु जनसंचार के माध्यम से हिन्दी के बढ़ते कदम से इस तरह की मानसिकता में बदलाव आता दिखायी देता है । आज मीडिया कई तरह के अत्याधुनिक प्रयोगों से लैस है जैसे विज्ञापनों के क्षेत्र में अलग-अलग तरह के विशेषज्ञों की माँग हो रही है । देखा जाए तो मीडिया का मुख्य कार्य है समाज से जुड़े मुद्दों को समाज के सामने रखना और हम साथ में यह भी कह सकते हैं कि इससे हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार को भी बढ़त मिली है ।

संचार माध्यम यदि आज के आदमी को पूरी दुनिया से जोड़ते हैं तो वे ऐसा भाषा के द्वारा ही करते हैं । अत: कहना गलत नहीं होगा कि संचार माध्यम की भाषा हिन्दी के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है । आज व्यवहार क्षेत्र की व्यापकता के कारण संचार माध्यमों के सहारे हिन्दी भाषा का बहुमुखी विकास हो रहा है। अत: यह कहना गलत नहीं होगा कि संचार माध्यमों ने हिन्दी के जिस विविधतापूर्ण सर्वसमर्थ नए रूप का विकास किया है, उसने भाषासमृद्ध समाज के साथ-साथ भाषा वंचित समाज के सदस्यों को भी जोड़ने का काम किया है । भारत तक पहुँचने के लिए बड़ी से बड़ी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भी हिन्दी और भारतीय भाषाओं का सहारा लेना पड़ रहा है । हिन्दी के इस रूप विस्तार के मूल में गतिशीलता हिन्दी का बुनियादी चरित्र है । हिन्दी की प्रकृति लचीली है इसी वजह से हिन्दी स्वयं को सामाजिक आवश्यकताओं के लिए बदल लेती है । इस प्रकार कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं शताब्दी में जनसंचार के सभी माध्यमों के विकास नए-नए आयामों को छू रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप हिन्दी भाषा भी नयी-नयी चुनौतियों का सामना करते हुए निरंतर आगे बढ़ रही है और अधिक से अधिक शक्ति का अर्जन कर रही है ।परंतु राजनीतिक, सामाजिक, भौगोलिक और आर्थिक विषयों की जानकारी के अभाव में असत्य सूचनाओं तथा चित्रों का इस्तेमाल हो जाता है । इस मीडिया की भाषा मर्यादित नहीं होती । यह मीडिया हिन्दी भाषा के साथ सबसे ज्यादा खिलवाड़ कर रहा है ।सोशल मीडिया का प्रयोग स्वच्छ व्यवस्था, विश्वास और उत्तरदायित्व, नागरिक कल्याण, लोकतंत्र, राष्ट्र के आर्थिक विकास की सूचना के आदान-प्रदान में व संवाद प्रेषण के साथ व्यवस्था एवं नागरिकों के बीच विभिन्न व्यवस्था एवं सेवाओं को एकीकृत करने, एक संस्था के भीतर तथा सिस्टम के भीतर विभिन्न स्तरों पर सूचनाओं का आदान-प्रदान करने में किया जाए तो सोशल मीडिया की न केवल सार्थकता सिद्ध होगी बल्कि एक मील का पत्थर गढ़ेगा ।

सोशल मीडिया का संबंध सिर्फ इलेक्ट्रॉनिक और सूचना टेक्नॉलोजी व इंटरनेट से नहीं है बल्कि यह व्यवस्था के सुधारों को साकार करने का एक शानदार अवसर भी उपलब्ध करवाता है । इंटरनेट और सोशल मीडिया में पदार्पण से पहले लोग छोटी-छोटी बातों, विचारों ,समाचारों, छायाचित्रों और विडियो आदि पर परिश्रम से ज्यादा निर्भर रहते थे । लेकिन लोगों की जीवन शैली में इन्फर्मेशन टेक्नॉलजी कम्यूनिकेशन, इंटरनेट के संगम से बने सोशल मीडिया के प्रयोग ने अनेक परिवर्तन ला दिए हैं । गाँव और शहर का अंतर अब लुप्त हो गया है ।बात अगर हम विज्ञापनों की करें तो आज के युग में विज्ञापनों का महत्व स्वयसिद्ध है । आज हर चीज विज्ञापित हो रही है । मेरा विचार है कि किसी भी तथ्य को अगर बार-बार दोहराया जाए तो वह सत्य प्रतीत होने लगता है- यह विचार ही विज्ञापनों का आधारभूत तत्व है । विज्ञापन अपने छोटे से कलेवर में बहुत कुछ समाए होते हैं।बहुत कम बोलकर भी बहुत कुछ कह जाते हैं । यदि विज्ञापनों के गुण और ताकत को हम समझने लगें तो अधिकांश विज्ञापन हमारे सामने कोई आक्रमणकारी अस्त्र न रहकर कला के श्रेष्ठ नमूने बनकर उभरेंगे । आज हिन्दी भाषा को किसी अन्य भाषा से नहीं बल्कि हिन्दी के ही हत्यारों द्वारा हिन्दी का कत्ल हो रहा है । देश में ऐसे कई धन्नासेठ हैं जो प्रेस को मीडिया को अपनी ढाल बनाए बैठे हैं। कुछ लोग तो अपने रुतबे को कायम रखने के लिए ऐसा कर रहे हैं । ऐसे में प्रेस हो या मीडिया उसमें काम करने वाले की क्या अहमियत होगी, वह कितना स्वतंत्र होगा, इसका अंदाजा लगाना बहुत आसान है यदि कोई पत्रकार कभी अपनी मर्जी से कोई खबर लिख दे और उसे छापने के लिए प्रेस पर दबाव डाले तो समझो गयी उसकी नौकरी । आज विषय है कि हिन्दी के विस्तार प्रसार में मीडिया की क्या अहम भूमिका है आज के युग में जूते-चप्पल से लेकर टाई, रूमाल तक हर चीज विज्ञापित हो रही है। विज्ञापन तैयार करने से पहले उद्यमी के दिमाग में यह बात स्पष्ट होती है कि उसका उपभोक्ता कौन है ? और अपने विज्ञापनों में उद्यमी/विज्ञापन एजेन्सी उसी उपभोक्ता समूह को सम्बोधित करती है । उस समूह की रुचि, आदतों को लक्ष्य करके ही विज्ञापन की भाषा, चित्र एवं अखबार, पत्रिकाओं का चुनाव किया जाता है । राष्ट्रीय भाषा होने के नाते हिन्दी के महत्व को देखते हुए एनएसडी, आकाशवाणी द्वारा संवाददाताओं के लिए हिन्दी भाषा कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

इन कार्यशालाओं का मुख्य उद्देश्य हिन्दी उच्चारण और गैर-हिन्दी भाषी संवाददाताओं का मौखिक कौशल उन्नत बनाना था ।एक सूचना को विश्व के कोने-कोने तक पहुँचाने के लिए एक संदेश एक भाषा से दूसरी, दूसरी से तीसरी और तीसरी से चौथी भाषा की गोद में कूदता हुआ विश्व के सभी उन्नत भाषाओं की गोद में खेलने लगा । सात हजार वर्ष पूर्व सांकेतिक भाषा के रूप में संचार के प्रयोग को भाषा रूपी साधन ने अपनी शरण देकर सार्थक बनाया । भारत ने इंटरनेट पत्रकारिता में लगभग बहुत साल पहले दस्तक दी । कुछ समय पहले तक जहाँ हमें समाचार सम्बंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु समाचार-पत्र, रेडियो आदि पर निर्भर रहना पड़ता था परंतु अब यह स्थान समाचार पोर्टल के रूप में विकसित हो चुका है । इंटरनेट पत्रकारिता पर काफी लम्बे समय तक अंग्रेजी भाषा का कब्जा रहा है । परंतु गत कई वर्षों से हमारी मातृ-भाषा हिन्दी का प्रयोग समाचार पोर्टल के रूप में किया जाने लगा है । अभी कुछ साल में ही याहू व जागरण के मध्य हुए करार ने हिन्दी समाचार पोर्टल के भविष्य को चार चाँद लगा दिए हैं । हमारी हिन्दी भाषा में ताजा तरीन समाचारों से लेस वेबसाइटों ने समाचारों की रूपरेखा को नया आयाम प्रदान किया है ।

हिन्दी समाचार पोर्टल के रूप में जागरण डॉट कॉम ने विश्व की प्रमुख समाचार वेबसाइटों में उच्च स्थान पाकर भारत के मस्तक को और ऊँचा कर दिया है । इस सबसे मान सम्मान और बढ़ा है । वास्तव में सूचना प्रोद्यौगिकी और आधुनिक संचार क्रांति के इस युग में यदि हम यह स्वीकार कर लें कि भारत की एक संपर्क भाषा आवश्यक है और वह केवल हिन्दी ही हो सकती है तो हिन्दी उस चुनौती का सामना करने में समर्थ हो जाएगी जो उसके सामने मुँह बाए खड़ी है । इंटरनेट एक ऐसा मंच है जहाँ से हम अपनी हिन्दी भाषा को अंतरराष्ट्रीय पटल पर चमका सकते हैं ।दुनिया भर में हिन्दी की महत्वपूर्ण समाचार वेब साइटों से समाचार एकत्रित करके एक स्थान पर उपलब्ध करवाकर पाठक का काम आसान कर दिया है । हिन्दी के लिए सुखद बात यह है कि हिन्दी भाषा समाचार पढ़ने वालों की संख्या अंग्रेजी पढ़ने वालों से कई ज्यादा पाई गयी ।हर बात अब हिन्दी में होगी,हर साँस में अब हिन्दी होगी । हिन्दी चाहने वालों की मेहनत जरूर रंग लाएगी, कोने-कोने के तखतो ताज पर अब हिन्दी होगी ।

-आभा पालीवाल
अध्यापिका, कलगीधर नेशनल पब्लिक स्कूल
इंद्रपुरी, नई दिल्ली-110012

''राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा से अधिक बलशाली कोई तत्व नहीं । मेरे विचार में हिन्दी ही ऐसी भाषा है।''
-लोकमान्य गंगाधर तिलक

जिन भारतीयों को पूरे देश से लगाव है, वे हिन्दी का महत्व समझते हैं, हिन्दी है देश-प्रेम की भाषा

यह बात बार-बार साबित हो रही है कि जिन भारतीयों को पूरे देश से जुड़ाव-लगाव है वे तो हिन्दी का महत्व समझते हैं, लेकिन जो राष्ट्रीय एकता के प्रति लापरवाह हैं, प्रायः वहीं हिन्दी पर हीला-हवाला करते हैं। हमारे जो बुद्धिजीवी माओवादियों, अलगाववादियों, जिहादियों आदि से सहानुभूति रखते हैं, वे हिन्दी का विरोध भी करते हैं। इसके विपरीत जो देश की धर्म-संस्कृति, एकता, अखंडता के प्रति समर्पित हैं, वे अपनी एक राष्ट्रीय भाषा का महत्व समझते हैं। इसे आरंभ से ही देख सकते हैं। ब्रिटिश राज के विरुद्ध आंदोलन में हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा बनाने के प्रयास हुए थे। ये प्रयास कलकत्ता और बंबई से हुए थे, न कि इलाहाबाद या पटना से। इसके लिए मराठी तिलक महाराज, बंगाली बंकिम चंद्र और रवींद्रनाथ, तमिल सुब्रहमण्यम भारती और गुजराती गांधी जैसे महापुरुषों ने प्रयास किए। नोट करें, अभी हिन्दी की पैरोकारी करने वाले अमित शाह भी गुजराती हैं।

इतिहास दिखाता है कि हिन्दी देश-प्रेम की भाषा रही है। वह किसी सीमित क्षेत्र की भाषा नहीं। इसीलिए इसके प्रति किसी क्षेत्र का आग्रह न था। न ही कोई क्षेत्र हिन्दी को 'पराई' समझता था। वही स्थिति आज भी है। संविधान सभा में कृष्णस्वामी अय्यर, गोपाल स्वामी आयंगर, टीटी कृष्णमाचारी जैसे दक्षिण भारतीय दिग्गजों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकार किया था। तब यह सहज बात समझी गई थी जिसमें देशप्रेम की भावना थी। भारत में हिन्दी किसी क्षेत्र विशेष की सीमित भाषा कभी नहीं थी। बांग्ला, तमिल, कन्नड़, मलयाली, मराठी की तरह ही छत्तीसगढ़ी, कुमाऊंनी, गढ़वाली, ब्रज, अवधी, भोजपुरी, मगधी, अंगिका और मैथिली, आदि के सीमित प्रदेश हैं, किंतु हिन्दी पूरे देश का स्वर है। यह शुरू से अभी तक देखा जा सकता है।

गलत परिभाषा की वजह से हिन्दी को लेकर भ्रांतियां फैलीं

महान कवि-चिंतक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन (अज्ञेय) के शब्दों में, हिन्दी 'एक समग्र संस्कृति की संवाहिका' रही है। इसीलिए वह राष्ट्रीय भावनाओं व नए विचारों को ग्रहण कर, फिर संश्लेषण कर उसे पुनः देश के प्रत्येक कोने में पहुंचा कर 'क्लियरिंग हाउस' का काम भी करती रही है। अज्ञेय मूलतः पंजाबी थे, मगर गहरे अवलोकन से उन्होंने भाषाओं की वास्तविक स्थिति को समझा था। ठीक यही बात महान क्रांतिकारी भगत सिंह ने भी पहले कही थी। दरअसल, हिन्दी को लेकर देश में जो भ्रांतियां फैलीं उनका एक कारण यही है कि उसे गलत परिभाषित किया जाता है। हिन्दी भी एक बोली, 'खड़ी बोली' है। जैसे अवधी, भोजपुरी, आदि अन्य बोलियां हैं।

देवनागरी लिपि में लिखने पर अन्य भाषाएं भी हिन्दी जैसी ही लगती हैं। देश के एक क्षेत्र को 'हिन्दी क्षेत्र' मानने का भ्रम इसलिए चलता है, क्योंकि उस क्षेत्र की बोलियां देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं। किंतु यदि बांग्ला या गुजराती को देवनागरी में लिखें तो वे भी मैथिली या भोजपुरी जैसी ही हिन्दी लगेंगी। आखिर हमारा राष्ट्र-गीत और राष्ट्र-गान दोनों ही बांग्ला गीत और गान हैं! परंतु देवनागरी में लिखने पर वह किसी को बांग्ला नहीं लगते। वही स्थिति गुजराती, तेलुगु, पंजाबी, कन्नड़, उर्दू, आदि के साथ भी है।

हिन्दी किसी क्षेत्र विशेष की भाषा नहीं

हिन्दी किसी क्षेत्र विशेष की भाषा नहीं है। वह भारत के सभी भाषा-भाषियों के सम्मिलित योगदान से बनी है, उसकी कोई विशिष्ट या अलग शब्दावली नहीं है। इसीलिए वह पूरे भारत में बोली, समझी जाती है। वह या तो पूरे भारत की भाषा है या कहीं की नहीं है। यही हिन्दी की पहचान और स्थिति है। इसीलिए भगत सिंह और अज्ञेय, दोनों ने कहा था कि देश में एक लिपि, देवनागरी, प्रचलित करने का प्रयास करें तो राष्ट्रीय भाषा की समस्या स्वतः सळ्लझ जाएगी। देवनागरी में लिखी कोई भी भारतीय भाषा हर देशवासी के लिए सरल, सहज, सहल होगी। उस पर अधिकार करना मामूली बात होगी जो अंग्रेजी के लिए पूरा जीवन लगाकर भी अधिकांश के लिए संभव नहीं।

लोग हिन्दी भी समझेंगे

जहां तक अंतरराष्ट्रीय मंचों पर 'हिन्दी समझेगा कौन?' का प्रश्न है तो उन्हीं मंचों पर जापानी, हिब्रू, जर्मन, अरबी और रूसी आदि भी बोली जाती है। जैसे उसे सभी समझते हैं, वैसे ही हिन्दी भी समझेंगे। यानी समांतर अनुवाद के प्रसारण से। यह दशकों पुरानी और मामूली, तकनीक है। कोई भाषा पूरी दुनिया में सभी नहीं समझते, लेकिन यदि बात महत्वपूर्ण हो तो दुनिया के कोने-कोने में उसे समझ लिया जाता है। जैसे, टैगोर की गीतांजलि। अतः जरूरी यह है कि हम पहले भारत के हृदय की बात बोलें। ऐसी बात अपनी भाषा में ही बोली जा सकेगी। जब हम ऐसा बोलने लगेंगे तो दुनिया हमें उसी तरह सुनेगी, जैसे वह संस्कृत में उपलब्ध संपूर्ण ज्ञान भंडार को सदियों से सुनती-गुनती रही है।

दुनिया में मौलिकता का महत्व है, माध्यम का नहीं

दुनिया में आज भी भारत की पहचान यहां की भाषा में लिखित

शेष पृष्ठ संख्या 37 पर

हिन्दी को बोलियों से मत लड़ाइए

मनुष्य की भांति भाषाओं का भी अपना समय होता है जो एक बार निकल जाने के बाद वापस नहीं लौटता।इसे हम संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश इत्यादि के साथ घटित इतिहास के द्वारा समझ सकते हैं। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि आदिकाल में राजस्थानी मिश्रित डिंगल और पिंगल शैली तथा बुंदेली एवं मैथिली मुख्य रूप से काव्य-भाषा थी।उसी समय अमीर खुसरो ने खड़ी बोली में काव्य-रचना करके अपनी विशिष्ट पहचान बनाई।इसके बाद सारा सूफी-काव्य अवधी में लिखा गया।इस अवधी में मलिक मुहम्मद जायसी और गोस्वामी तुलसीदास जैसे महाकवि भी आए जिन्होंने पद्मावत और रामचरितमानस जैसे महाकाव्य लिखकर अवधी को विश्व-स्तरीय काव्य-भाषा बना दिया।इसके समानांतर सूरदास एवं अन्य कृष्णभक्त कवियों ने ब्रजभाषा को काव्य-भाषा का सबसे लोकप्रिय माध्यम बनाकर उसे आगामी समय के लिए भी प्रतिष्ठित कर दिया।अंग्रेजी शासन के दौरान सबसे पहले सत्ता द्वारा हिन्दी-उर्दू विवाद पैदा किया गया।जब स्वाधीनता संग्राम के कठिन संघर्ष के दिनों में देश के नेताओं, सेनानियों और साहित्यकारों-पत्रकारों ने हिन्दी को लड़ाई की मुख्य भाषा बनाया तब हिन्दी राष्ट्रीय-संवाद का एक व्यापक तथा प्रभावी माध्यम बन गयी।यदि भारत का संविधान लागू होने तक महात्मा गांधी जीवित रहते तो वह हर हाल भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा बन जाती।गांधीजी के न होने का खामियाजा उसे राजभाषा बनकर उठाना पड़ा।आज जिस तरह हम लोकतांत्रिक देश के रूप में आगे बढ़ने के बाद वापस राजाओं-महाराजाओं के समय में नहीं लौट सकते । उसी तरह हम हिन्दी के अति-विकसित एवं विश्वव्यापी भाषा बनने के बाद वापस उन बोलियों के युग में नहीं लौट सकते जो किसी समय साहित्य -सृजन का मुख्य माध्यम थीं। यहां तक कि संस्कृत जैसी गौरवशाली भाषा के दौर में प्रत्यावर्तन करना असंभव है।ऐसा करना न केवल आत्मघाती होगा अपितु संपूर्ण देश में भाषिक अराजकता का माहौल बना देगा।

आज हिन्दी के समक्ष त्रिआयामी संकट उपस्थित हो गया है। पहला संकट उसे हर जगह और हर स्तर पर अंग्रेजी के वर्चस्व एवं साम्राज्यवाद से पार पाने का है। दूसरा संकट वायको जैसे कुछ नेताओं द्वारा हिन्दी थोपने के विरोध को लेकर है। ऐसे नेताओं को अंग्रेजी थोपे जाने को लेकर कोई आपत्ति नहीं है।इसी क्रम में तीसरा जो सबसे बड़ा संकट है वह बोलियों से उसे लड़ाने का है।इस समय हिन्दी के भविष्य एवं अखंडता के समक्ष इतिहास का सबसे बड़ा संकट उपस्थित है।अंग्रेजों ने दो सौ वर्षों के शासन के दौरान जो सफलता नहीं पायी उसे हमारे देश के कतिपय स्वार्थी तत्त्व साकार करने के लिए प्रयासरत हैं। कुछ लोग हिन्दी की उन बोलियों को जो सैकड़ों साल से उसकी प्राणधारा रही हैं उन्हें संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करवाकर हिन्दी की प्रतिस्पर्धा में लाना चाहते हैं। ऐसे लोग उन बोलियों के जो हिन्दी का अविच्छिन्न अंग हैं और जिनके साथ उसका संबंध अंगांगिभाव का है उन्हें संवैधानिक दर्जा देकर उसे स्वतंत्र व्यक्तित्व देना चाहते हैं।उसे हिन्दी की सौतन बनाना चाहते हैं।

डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय

हम भारतीयों को यह नहीं भूलना चाहिए कि अमेरिका एवं चीन जैसे राष्ट्रों के रक्षा बजट की तरह अपनी भाषाओं के प्रसार एवं दूसरी भाषाओं के विस्थापन का बजट भी है। जिस नेपाल में हिन्दी कभी दूसरी राजभाषा थी आज वहां हिन्दी का स्थान चीन की भाषा मंदारिन ले चुकी है।ठीक इसी तरह अंग्रेजी की समर्थक ताकतें हिन्दी को उसकी बोलियों से लड़वाकर दोनों को ही विस्थापित करना चाहतीं हैं। इसके पीछे एक गहरी सांस्कृतिक साजिश है जिसे क्षेत्रीय स्वार्थ में लिप्त लोग नहीं समझ पा रहे हैं। विश्व की बड़ी ताकतें अपनी भाषा एवं संस्कृति के प्रचार-प्रसार में संलग्न हैं और हम इतिहास से कुछ भी न सीख कर आपसी संघर्ष में।

आचार्य चाणक्य कहा करते थे कि भाषा, भवन, भेष और भोजन संस्कृति के निर्माणक तत्त्व हैं । किसी भी संस्कृति की निर्मित इन चारों के समन्वय से होती है। यदि आज नयी पीढ़ी चीनी व्यंजनों, मैकडोनाल्ड के बर्गर और पेप्सी-कोक पर लार टपकाती है, अंग्रेजों जैसा कपड़ा पहनती है तो भाषा ही एकमात्र साधन है जो हमारी राष्ट्रीय अस्मिता और संस्कृति की रक्षा कर सकती है । क्योंकि भवन निर्माण के अमेरिकी मॉडल को लगभग पूरे विश्व ने स्वीकार कर लिया है । ऐसी स्थिति में जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं उसका मूल स्वरूप खतरे में है। अत: संकट को उसकी समग्रता में समझने की जरूरत है । आज फिर से हमारे कुछ नव निर्वाचित सांसद भोजपुरी को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करवाने की बात कर रहे हैं । इसके अलावा हिन्दी की 38 बोलियों के तथाकथित पुरस्कर्ता गृहमंत्रालय के पास उसे संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करवाने के लिए आवेदन कर चुके हैं। इन बोलियों में अवधी, ब्रज, बुंदेली, मालवी, कुमायूंनी, गढ़वाली, हरियाणवी, निमाड़ी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी, अंगिका, मगही, सरगुजिया, हालवी, बघेली इत्यादि का समावेश है। लेकिन सबसे ज्यादा दबाव भोजपुरी और राजस्थानी की ओर से बनाया जा रहा है। भोजपुरी के समर्थक तो अवधी भाषी जनसंख्या एवं साहित्यकारों को भी अपने अंतर्गत दिखा रहे हैं।

मैं भारत सरकार से आग्रह करता हूँ कि यह भाषाई राजनीति केवल भोजपुरी और राजस्थानी को स्वतंत्र भाषा का दर्जा देने से खत्म नहीं होगी। यह आरक्षण से भी ज्यादा खतरनाक खेल है

जब तक सारी 38 बोलियों को भाषा का दर्जा नहीं मिल जाएगा तब तक वे संघर्षरत रहेंगी। इसके बाद मराठी, गुजराती, बांग्ला समेत दूसरी भाषाओं की बोलियां भी स्वतंत्र भाषा का दर्जा हासिल करने के लिए सन्नद्ध होंगी ।ऐसी स्थिति मे भयावह भाषिक अराजकता फैल जाएगी जिससे निपटना किसी भी सरकार के लिए आसान नहीं होगा । केवल वोट की राजनीति के लिए हिन्द और हिन्दी के स्वाभिमान पर चोट न की जाए। उसे तोड़ा न जाए। आज जिस भोजपुरी का कोई मानक रूप नहीं है, कोई व्याकरण नहीं है, कोई साहित्यिक परंपरा नहीं है और जिसमें कोई दैनिक अखबार नहीं निकलता है उसे हिन्दी से अलग करने वाले आखिर किस पात्रता के आधार पर बात कर रहे हैं ।इस संदर्भ में महात्मा गांधी का कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि "जो वृत्ति इतनी वर्जनशील और संकीर्ण है कि हर बोली को चिरस्थायी बनाना और विकसित करना चाहती हो, वह राष्ट्र विरोधी और विश्व विरोधी है ।मेरी विनम्र सम्मति में तमाम अविकसित और अलिखित बोलियों का बलिदान करके उन्हें हिन्दी (हिन्दुस्तानी) की बड़ी धारा में मिला देना चाहिए। यह देश हित के लिए दी गई कुर्बानी होगी आत्महत्या नहीं । 'यंग इंडिया' 27 अगस्त 1925। इसी लक्ष्य को साकार करने का कार्य हमारे संविधान निर्माताओं ने किया है । इस महादेश में आंतरिक एकता तथा संवाद का एकमात्र माध्यम बनकर हिन्दी ने अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी है। अंतर्राष्ट्रीय भोजपुरी सम्मेलन के प्रथम अध्यक्ष डॉ विद्यानिवास मिश्र ने 'हिन्दी का विभाजन' शीर्षक आलेख में लिखा है कि, जो बोलियों को आगे बढ़ाने की बात करते हैं वे यह भूल जाते हैं कि ये बोलियां एक दूसरे के लिए प्रेषणीय होकर ही इन बोलियों के बोलने वालों के लिए महत्व रखती हैं, परस्पर विभक्त हो जाने पर इनका कौड़ी बराबर मोल न रह जाएगा ।भोजपुरी, अवधी, मैथिली, बुंदेली या राजस्थानी के लिए गौरव होने का अर्थ यह नहीं होना चाहिए कि हिन्दी का अब तक का इतिहास, एक केंद्र निर्माता इतिहास झूठा हो जाए और इतने बड़े भू भाग के भाषा-भाषी एक दूसरे से बिराने होकर देश के विघटन के कारण बन जाएँ ।

आज अपने निहित स्वार्थ के लिए जो लोग हिन्दी को तोड़ने का उपक्रम कर रहे हैं वे देश की भाषिक व्यवस्था के समक्ष गहरा संकट उपस्थित कर रहे हैं । वे यह नहीं जानते हैं कि हिन्दी के टूटने से देश की भाषिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी और देश को एकता के सूत्र में पिरोने वाला धागा टूट जाएगा।वस्तुत: जिसे हम इस देश की राजभाषा हिन्दी कहते हैं वह अनेक बोलियों का समुच्चय है। हिन्दी की यही बोलियां उसकी प्राणधारा हैं जिनसे वह शक्तिशालिनी बनकर विश्व की सबसे बड़ी भाषा बनी है ।लेकिन जो बोलियाँ विगत 1300वर्षों से हिन्दी का अभिन्न अवयव रही हैं उन्हें कतिपय स्वार्थी तत्त्व अलग करने का प्रयास कर रहे हैं । ऐसी स्थिति में हमें एकजुट होकर हिन्दी को टूटने से बचाना चाहिए अन्यथा देश की सांस्कृतिक तथा भाषिक व्यवस्था चरमरा जाएगी ।यहां विचारणीय है कि हिन्दी और उसकी तमाम बोलियां अपभ्रंश के सात रूपों से विकसित हुई हैं और वे एक दूसरे से इतनी घुलमिल गयी हैं कि वे परस्पर पूरकता का अद्‌भुत उदाहरण हैं ।यह भी सच है कि हिन्दी के भाग्य में सदैव संघर्ष लिखा है । वह संतों, भक्तों से शक्ति प्राप्त करके लोक शक्ति के सहारे विकसित हुई है।

आज विश्व में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा होने के कारण विश्व की नवसाम्राज्यवादी ताकतें हिन्दी को तोड़ने का उपक्रम कर रही हैं । वे भलीभाँति जानती हैं कि यदि हिन्दी इसी गति से बढ़ती रहेगी तो विश्व की बड़ी भाषाओं मसलन मंदारिन, अंग्रेजी, स्पैनिश, अरबी इत्यादि के समक्ष एक चुनौती बन जाएगी और इंग्लैंड को आज यह भय सता रहा है कि कहीं ऐसा न हो कि 2050 तक अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी वहां की प्रमुख भाषा न बन जाए । अभी कुछ समय पहले पंजाबी कनाडा की दूसरी राजभाषा बना दी गई है और संयुक्त अरब अमीरात ने हिन्दी को तीसरी आधिकारिक भाषा का दर्जा दे दिया है। दूसरी ओर आज हिन्दी मानव संसाधन की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम बन गयी है । हिन्दी चैनलों की संख्या लगातार बढ़ रही है । बाजार की स्पर्धा के कारण ही सही अंग्रेजी चैनलों का हिन्दी में रूपांतरण हो रहा है । इस दौर में वेब-लिंक्स और गूगल सर्किट का बोलबाला है । इस समय हिन्दी में भी एक लाख से ज्यादा ब्लाग सक्रिय हैं । अब सैकड़ों पत्र-पत्रिकाएँ इंटरनेट पर उपलब्ध हैं । गूगल का स्वयं का सर्वेक्षण भी बताता है कि विगत तीन वर्षों में सोशल मीडिया पर हिन्दी में प्रस्तुत होने वाली सामग्री में 94 प्रतिशत की दर से इजाफा हुआ है जबकि अंग्रेजी में केवल 19 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है । यह इस बात का द्योतक है कि हिन्दी न केवल विश्व भाषा बन गयी है अपितु वैश्वीकरण के संवहन में अपनी प्रभावी भूमिका अदा कर रही है। हिन्द और हिन्दी की विकासमान शक्ति विश्व के समक्ष एक प्रभावी मानक बन रहे हैं। फलत: कतिपय स्वार्थी तत्त्व हिन्दी को तोड़ने में संलग्न हो गये हैं । वे जानते हैं कि हिन्दी बाहर की तमाम चुनौतियों का सामना करने के लिए सन्नद्ध हो रही है । यदि उसे कमजोर करना है तो बोलियों से उसका संघर्ष कराना होगा । इस लक्ष्य से परिचालित होकर इस समय हिन्दी की 38 बोलियां संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल होने के लिए प्रयासरत हैं । यदि ऐसा होता है तो न केवल हिन्दी कमजोर होगी अपितु हिन्दी के बृहत्तर परिवार से कटते ही उन बोलियों का भविष्य भी अनिश्चित हो जाएगा। आखिर जो विषय साहित्य, समाज, भाषा विज्ञान और मनीषी चिंतकों का है उसे राजनीतिक रंग क्यों दिया जा रहा है ।

अब तो सर्वोच्च न्यायालय ने भी कह दिया है कि कोई भी राजनीतिक दल जाति, धर्म और भाषा के आधार पर मत नहीं मांग सकता। हिन्दी का प्रश्न अभिनेताओं, नेताओं के अधिकार क्षेत्र में नहीं आता है। इस देश के जन समुदाय ने उसे संपर्क भाषा के रूप में स्वत: स्वीकारा है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जब संविधान निर्माताओं ने देश की राजभाषा के रूप में हिन्दी का सर्वसम्मति से चयन किया था तो उन्होंने स्वेच्छा से देश हित में बोलियों का बलिदान करवाया था। यह कुछ वैसा ही कार्य था जैसे देवासुर संग्राम के समय सारे देवताओं ने अपनी-अपनी विशेष शक्तियाँ दुर्गा को सौंप दी थी ।फलत: शक्ति समुच्चय के कारण दुर्गा असुरों के संहार में समर्थ हुईं । हिन्दी को इसी तरह के दायित्व का निर्वहन विश्व भाषाओं के समक्ष प्रतिस्पर्धी के रूप में करना है ।लेकिन कुछ ऐसी ताकतें जो हिन्द और हिन्दी की शुभचिंतक नहीं है वे हिन्दी की उन्हीं बोलियों को उसकी प्रतिस्पर्धी बना रही हैं । यह सारा देश जानता है कि हिन्दी अपने संख्याबल के कारण भारत की राजभाषा है और इसी ताकत के बल पर संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा का दर्जा हासिल कर सकती है। लोकतंत्र में संख्या बल के महत्व से सभी परिचित हैं । यदि भोजपुरी राजस्थानी समेत हिन्दी की किसी भी बोली को संविधान की आठवीं अनुसूची मे शामिल किया जाता है तो हिन्दी चिंदी-चिंदी होकर बिखर जाएगी और संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनाने का लक्ष्य ध्वस्त हो जाएगा । इससे हिन्द और हिन्दी के सांस्कृतिक-भाषिक बिखराव की अंतहीन प्रक्रिया आरंभ हो जाएगी जिसे कोई भी सरकार संभाल नहीं पाएगी ।यहां तक कि गांधी, सुभाष, विनोबा भावे समेत तमाम विभूतियो का संघर्ष और स्वप्न मिट्टी में मिल जाएगा जो कार्य अंग्रेज दो सौ वर्षों के शासन के द्वारा नहीं कर सके वह हमारे बीच के कतिपय स्वार्थी तत्त्व साकार कर देंगे अर्थात 2050 तक अंग्रेजी बोलने वालों की संख्या हिन्दी बोलने वालों की संख्या से ज्यादा हो जाएगी और हिन्दी को बेदखल करके अंग्रेजी को सदा सर्वदा के लिए प्रतिष्ठित कर दिया जाएगा । हमारी हजारों वर्षों की सभ्यता, संस्कृति और राष्ट्रीय अस्मिता अपनी पहचान खो देंगी । इसलिए देश वासियो को जागने और तत्पर होने की जरूरत है । हिन्दी के संयुक्त परिवार के टूटने से देश की सांस्कृतिक व्यवस्था भी बिखर जाएगी जिसकी फलश्रुति देश की बौद्धिक परतंत्रता में होगी । जिस तरह गंगा अनेक सहायक नदियों से मिलकर ही सागर तक की यात्रा करती हैं और अपने साथ उन नदियों को भी सागर तक पहुंचाती है उसी तरह हिन्दी से अलग होते ही बोलियों का अस्तित्व भी संकट में आ जाएगा। हिन्दी हमारी राष्ट्रीय अस्मिता की संवाहक है।वह राष्ट्रीय संपर्क और संवाद का एकमात्र माध्यम है । यदि हम इस माध्यम अथवा आधार को ही कमजोर कर देंगे तो देश अपने आप कमजोर हो जाएगा ।हमारी भारतीयता कमजोर हो जाएगी ।

अत: मैं देशवासियों से अपील करता हूँ कि यदि हमें भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीय अस्मिता को अक्षुण्ण रखना है तो हिन्दी के संयुक्त परिवार को टूटने से बचाना होगा और कोई दूसरा विकल्प नहीं है। हिन्दी के संयुक्त परिवार को तोड़ने वाले अपने स्वार्थवश आगामी संकट को समझ नहीं पा रहे हैं। इतिहास हमें तटस्थ रहने की छूट नहीं देगा। इस समय जो हिन्दी का पक्ष नहीं लेगा उसे भावी पीढियां क्षमा नहीं करेंगी। हम बोलियों के नाम पर आंदोलन करने वालों से पुन: अपील करता हूँ कि हिन्दी को बोलियों से मत लड़ाइए। जिस तरह किसी केंद्रीय सत्ता के टूटने के बाद छोटी ताकतें बाहरी आक्रमण का सामना नहीं कर सकतीं उसी तरह हिन्दी के बिखरते ही अंग्रेजी उसकी बोलियों के साथ-साथ समस्त भारतीय भाषाओं के अस्तित्व के समक्ष भयावह चुनौती बन जाएगी। अत: जिस हिन्दी की प्राचीर के भीतर बोलियां सुरक्षित हैं उसे टूटने न दें। हमें भारत सरकार से माँग करनी चाहिए कि वह हिन्दी और दूसरी भारतीय भाषाओं की समस्त बोलियों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए एक स्वतंत्र अकादमी का गठन करे।

-डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

राष्ट्रभाषा-समस्या कब हल होगी

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की ये पंक्तियाँ एक राष्ट्र के लिए राष्ट्रभाषा के महत्व को पूर्णतया प्रदर्शित करती हैं-

बिना राष्ट्रभाषा स्वराज की गिरा, आप गूंगी असमर्थ
एक भारतीय बिना हमारी, भारतीयता का क्या अर्थ

व्यापक प्रचार-प्रसार और लोकप्रियता के कारण हिन्दी भारत की स्वयंसिद्ध राष्ट्रभाषा है। संविधान के अनुसार हिन्दी राष्ट्रभाषा भले ही कही जा रही है किन्तु वास्तव में वह देश की राजभाषा तक सीमित रह गयी है और सम्पूर्ण देश के राज्यों में उसे राजभाषा का भी सम्मान प्राप्त नहीं है । हिन्दी अपने वास्तविक राष्ट्रभाषा पद के लिए अब भी संघर्ष कर रही है। राजनीतिक छल-छन्द की शिकार-भारत स्वतंत्र हुआ, उसका संविधान बना किन्तु राष्ट्रभाषा का पद राजनीतिक छल-छन्द में धूमिल हो गया । स्व. पं. जवाहरलाल नेहरू ने अपनी कूटनीति और बाँटने की प्रवृत्ति को सफल बनाने के लिए हिन्दी को स्थायी वनवास दे दिया। राजभाषा अधिनियम 343/1 के अधीन हिन्दी के साथ अँग्रेजी को सहभाषा के रूप में प्रचलित करने का प्रावधान किया गया। राजभाषा अधिनियम की धारा 3/1 में यह जोड़ दिया गया कि जब तक भारत के एक भी राज्य की सरकार हिन्दी को अपने राज्य की राजभाषा स्वीकार करने में संकोच करेगी, तब तक हिन्दी पूरे संघ की राजभाषा नहीं होगी। तमिलनाडु जैसे राज्य तो हिन्दी के प्रबल विरोधी थे ही, नागालैंड जैसा छोटा राज्य भी अँग्रेजी को राजभाषा स्वीकार कर चुका है। अत: हिन्दी के पक्ष में राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने के निर्णय की आशा कभी नहीं की जा सकती है।

बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने निज भाषा के रूप में हिन्दी के प्रति उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा था- निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल

हिन्दी है अँग्रेजी से तिरस्कृत

राजभाषा के साथ अँग्रेजी को साथ रखने की छूट से हिन्दी को ही तिरस्कृत होना पड़ा। अँग्रेजी के बढ़ते वर्चस्व के कारण अकेली हिन्दी ही नहीं, भारत की अन्य राज्य-भाषाएं भी विकसित नहीं हो पा रही हैं। स्थिति यह है कि नयी पीढ़ी एक दिन स्वभाषा-मातृभाषा का नाम भी भूल जाएगी, वह केवल अँग्रेजी भाषा जानेगी क्योंकि शिक्षा के माध्यम के रूप में उसे अँग्रेजी भाषा ही सिखायी जा रही है।

राजनेताओं की स्वार्थी प्रवृत्ति दोषी

हमारे राजनेता विदेशों में अपनी राजनीति चमकाने के लिए भले ही कुछ कार्य हिन्दी में कर लेते हों, लिखे हुए वक्तव्य हिन्दी में पढ़ते हों या संवाद कर लेते हों परन्तु राष्ट्रीय स्तर पर राजकाज में हिन्दी का प्रयोग करना अपनी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझते हैं। इसी कारण स्वतंत्रता प्राप्ति के 72 वर्षों के बाद भी राष्ट्रभाषा का प्रश्न अनुत्तरित है। देश के स्वतंत्रता आन्दोलन के समय कोई भी नेता हिन्दी विरोधी नहीं था क्योंकि उन्हें ज्ञात था कि स्वतंत्रता का भाव जनता में हिन्दी माध्यम से ही जगाया जा सकता है। तब अँग्रेजी प्रेमी पं. नेहरू भी हिन्दी में ही अपना भाषण देते थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी स्वार्थी नेता मन में तो अँग्रेजी बसाए रहे और ऊपर से हिन्दी का गुणगान करते रहे। शासक और उच्च प्रशासनिक अधिकारी कार्य-व्यवहार में अँग्रेजी के पक्षधर रहे तथा हिन्दी की जड़ें काटते रहे।

प्रमुख हिन्दी विरोधी कौन

प्रमुख रूप से हिन्दी के विरोधी चार वर्गों में रखे जा सकते हैं- सरकारी कर्मचारी, अँग्रेजी भक्त, उर्दू भक्त, अहिन्दी भाषी ।

सरकारी कर्मचारी- सरकारी कार्यालयों में कार्यरत कर्मचारी अँग्रेजी माध्यम से शिक्षित होकर आते हैं। उन्हें हिन्दी में काम करने का ज्ञान नहीं होता। वे पुराने ढर्रे पर चलते रहते हैं। दूसरे वे हिन्दी में काम करना अपना अपमान समझते हैं। उन्हें डर है कि यदि वे हिन्दी में काम करने लगेंगे तो जनता उन्हें सामान्य आदमी मानने लगेगी और उनका पद-प्रभाव कम हो जाएगा। इसीलिए वे हिन्दी से दूर रहते हैं। अत: कर्मचारियों की भर्ती के समय ही उन्हें हिन्दी में कार्य करने के लिए अनिवार्य शर्त होनी चाहिए। उन्हें हिन्दी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

अँग्रेजी भक्त- मैकाले की कुटिल नीति के कारण शिक्षा का माध्यम हिन्दी के बजाय अँग्रेजी बना हुआ है। बच्चों को अँग्रेजी स्कूलों में पढ़ाना गर्व का विषय माना जा रहा है। अब तो अनेक हिन्दी माध्यम के स्कूलों को अँग्रेजी माध्यम में परिवर्तित किया जा रहा है। यह अत्यंत चिन्ताजनक विषय है। इन विद्यालयों में बच्चा हिन्दी या अपनी मातृभाषा में वार्तालाप भी नहीं कर सकता, उसे घर में भी अँग्रेजी में बात करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यही विद्यार्थी जब अपने कार्य क्षेत्र में उतरते हैं तब अपने गाँव-देहात, समाज और स्वभाषा से कट चुके होते हैं और पूर्ण अँग्रेज बन जाते हैं। अत: उनसे हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाने की आशा करना ही भूल है।

उर्दू भक्त- जनसामान्य में यह अवधारणा प्रचलित है कि हिन्दी हिन्दुओं की और उर्दू मुसलमानों की भाषा है जबकि हिन्दी में उर्दू सहित अन्य अनेक देशी-विदेशी भाषाओं के शब्द समाहित हैं। सामान्य बोलचाल में हिन्दू-मुस्लिम दोनों हिन्दी को अपनाते हैं किन्तु कुछ उर्दू भक्त देवनागरी लिपि में लिखने से परहेज करते हैं। वे हिन्दी के प्रबल विरोधी बने हुए हैं। इन्हीं लोगों ने उत्तर प्रदेश और बिहार में उर्दू को द्वितीय राजभाषा का सम्मान दिया है।

अहिन्दी भाषी- दक्षिण भारत, बंगाल जैसे राज्यों के निवासी, जो केन्द्रीय कार्यालयों में कार्यरत हैं, वे हिन्दी का विरोध करते हैं। उन्हें भय है कि यदि वे राजभाषा के रूप में हिन्दी को पूर्णतया अपना लेंगे तो अँग्रेजी हटा दी जाएगी और तब नौकरियों में अन्य राज्यों के अभ्यर्थी छा जाएंगे। वास्तविकता यह है कि वे लोग पर्यटकों, व्यापारियों और दूरस्थ मित्रों से हिन्दी में वार्तालाप कर लेते हैं और वे हिन्दी लिख-पढ़ भी लेते हैं।

समस्या का समाधान भी है-

राष्ट्रभाषा की समस्या हल करने के लिए दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है। शासन-प्रशासन में उच्च पदस्थ माननीयों को एक स्वर से पूरे देश में हिन्दी भाषा में कार्य करने का निर्णय लेना चाहिए। जो हिन्दी में कार्य करने में कुछ असहजता व्यक्त कर रहे हों, उन्हें हिन्दी सीखने के लिए कुछ समय दिया जा सकता है। इसके लिए व्यावहारिक, आन्दोलनात्मक, व्यापारिक एवं राजनीतिक ठोस प्रयास किए जाने चाहिए। हम प्रत्येक अवसर पर हिन्दी का प्रयोग करें, हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाएं और नौकरियों में हिन्दी शिक्षितों को वरीयता दें। अँग्रेजी में लिखे पत्रों का उत्तर न दें अथवा उनका उत्तर हिन्दी में दें। अँग्रेजी में छपे हुए निमंत्रण पत्रों को अस्वीकार कर दें। दुकानों के साइन बोर्ड हिन्दी में लिखवाने के लिए प्रेरित करें। जन-जन में हिन्दी के प्रति स्वाभिमान एवं अनुराग जगाएं और उन्हें मातृभूमि और मातृभाषा का सम्मान करना समझाएं। जनता में राष्ट्रभाषा के प्रति निष्ठा-प्रेम जगाकर और बच्चों को हिन्दी माध्यम से शिक्षा दिलाकर ही अँग्रेजी से मोहभंग होगा और हिन्दी अपना वास्तविक सम्मान पा सकेगी। आओ! हम मन से संकल्प लें- आओ! हम हिन्दी अपनाएं ।

शिक्षा का माध्यम हो हिन्दी, नव प्रेरणा जगाएं
बने ज्ञान-विज्ञान की भाषा, शब्द-समृद्ध बनाएं
अँग्रेजी का मोह त्याग दें, हिन्दी को दुलराएं
दें सम्मान राष्ट्रभाषा का, विश्व पटल पर छाएं

-गौरी शंकर वैश्य 'विनम्र'
संस्थापक/अध्यक्ष, विनम्र बालसाहित्य संस्थान, लखनऊ
117 आदिलनगर, विकास नगर, लखनऊ-226022

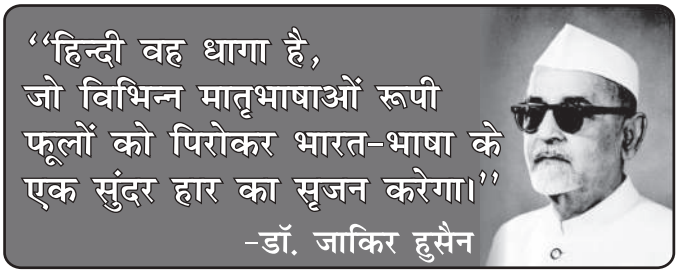

पृष्ठ संख्या 32 का शेष

उपनिषद, ब्रह्मसूत्र, योगसूत्र, रामायण, महाभारत, नाट्यशास्त्र आदि से है। नीरज चौधरी, राजा राव, खुशवंत सिंह जैसे लेखकों से नहीं। समाज की रचनात्मकता और मौलिकता अनिवार्यता उसकी अपनी भाषा से जुड़ी होती है। दुनिया में मौलिकता का महत्व है, माध्यम का नहीं। इसलिए यदि स्वतंत्र भारत में मौलिक चिंतन, लेखन का ह्रास होता गया तो अंग्रेजी के बोझ के कारण। मौलिक लेखन, चिंतन विदेशी भाषा में प्रायः असंभव है। कम से कम तब तक, जब तक ऑस्ट्रेलिया, अमेरिका की मूल सभ्यता की तरह भारत सांस्कृतिक रूप से पूर्णतः नष्ट नहीं हो जाता और अंग्रेजी यहां सबकी एक मात्र भाषा नहीं बन जाती। तब तक भारतीय बुद्धिजीवी अंग्रेजी में कुछ भी क्यों न बोलते रहें, वह वैसी ही यूरोपीय जूठन की जुगाली होगी, जिसकी बाहर पूंछ नहीं हो सकती।

मौलिक लेखन, चिंतन या रचनात्मकता को दुनिया भर में नोट किया जाता है।

आखिर गत सत्तर वर्षों से अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर हमारे बुद्धिजीवी अंग्रेजी में ही तो बोलते रहे! क्या उन बातों ने कहीं, किसी विषय में, कोई छाप छोड़ी है? कहीं उसका कोई संदर्भ लिया जाता है? हमारी तुलना में छोटे-छोटे देशों यथा जापान, पोलैंड, दक्षिण कोरिया आदि में अधिक मौलिक लेखन, चिंतन या रचनात्मकता को दुनिया भर में नोट किया गया। इस बीच भारत का वैचारिक या रचनात्मक अवदान क्या रहा? इस बिंदु पर सलमान रुश्दी या विक्रम सेठ जैसों को नहीं गिनना चाहिए, क्योंकि मूलतः वे भारत त्याग कर यूरोप में बस चुके हैं या उन जैसे हो चुके हैं। उन लेखकों में भारत के अवशेष भले हों, उनकी रचनाओं में भारत नहीं बोलता।

अपनी भाषा पर खड़ा होना अपरिहार्य है

वस्तुतः अमित शाह ने एक गंभीर और मूल्यवान बात की ओर उल्लेख किया है। जब तक हम अपनी भाषा में शिक्षण, लेखन, विमर्श पर नहीं लौटेंगे, कभी तुलनात्मक रूप से उनके समकक्ष नहीं हो सकते जो अपनी भाषाओं में यह सब करते हैं। शुरुआत के लिए प्रो. कपिल कपूर की अध्यक्षता वाली कपिल कुमार सरकारी समिति ने सटीक सुझाव दिया है कि प्रत्येक राज्य को अपनी भाषा में शिक्षा और सभी सार्वजनिक काम को नियम बना लेना चाहिए जैसा अंग्रेजों के आने से पहले होता रहा था। इस सुधार के बाद शेष समस्याएं स्वतः अपने समाधान की ओर बढ़ने लगेंगी। याद रहे, भारत की सांस्कृतिक शक्ति ही मूल शक्ति है। इसके लिए अपनी भाषा पर खड़ा होना अपरिहार्य है।

-शंकर शरण
(लेखक राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)
जागरण से साभार

डोगरी गीत

(१) एक डोगरी प्रेमगीत

डाडे बना.. बनाई जन्दे
नाहक गै हिरख जगाई जन्दे.
चेत्तैं बिच्च रोज आई आई
किश नमे पुआड़े पाई जन्दे।

कोर्टां लग्गियां चित्त चोरी दियां
रोज नमियाँ तरीकां पाई जन्दे.
अखियैं नै अखियाँ मलाइयै
कोई नमी गै अर्ज सुनाई जन्दे।

प्रीती पींगां उच्चियां लम्मियां मेदें दे झूटे झुटाई जन्दे.
मनै बेच्च पाई करमोल कोई
किश नमें गै रोग लाई जन्दे ।

गल्लैं दे लेच प्लेचौं कन्ने
कोई नमी फ्लोनी पाई जन्दे
भोली नजरें दा लाई पर्चा नमानि जेंद सूली टँगाई जन्दे.....

(२). चेत्ते.....

चेत्तें दी कोरजैं कदें सोक्के नी पोंदे
माऊ बगैर प्योके नी ओन्दे

मने दियाँ गन्ड्डीं खोलनै आली
आस्से ते पीड़ां फरोलने आली
इरखै दे ओ लाड़ जोक्के नी थोन्दे
माऊ बगैर प्योके नी ऊंडी

बाबल तेरे बेड़े तेरे बज्जा अज्ज रौंदे
तेरियां चिड़कां ते तेरे लाड़
अज्ज लक्ख मुल्लैं नी थोन्दे
ओ टल्लिएं दियाँ गुड्डियां ते काठे
दे घोड़े अज्ज अथरुएँ कन्ने नोन्दे
माऊ बगैर प्योके नी ओन्दे
माऊ बगैर प्योके नी ओन्दे

(३). डोगरी गीत

कुसुम शर्मा 'अंतरा'

आई जायां सुखनै च तू
मिकी तेरा मन्दा लगदा
पाई जायां फेरा जिन्दे
मिकी तेरा मन्दा लगदा

गल्लें दी रुणझुण लागे दमैं
नजरें नै नजरें मलागे दमैं
बिगड़ी दियाँ.....बनागे दमैं
सजना आई जायां.....
फेरा पाई जायां.....
आई जायां सुखने च तू.....

चंगी-मंदी खूब सनागे दमैं
रली मिली अत्थरु बगागे दमैं
रुसड़े दे भाग ....मनागे दमैं
सजना आई जायां,फेरा पाई जायां

आई जायां सुखनै च तू
मिकी तेरा मन्दा लगदा.....

-कुसुम शर्मा अंतरा
म.नं.-36, वार्ड नंबर-11
गोविन्द नगर, एम.एच चौक
उधामपुर-182101 (जम्मू कश्मीर)

भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह के अवसर पर सुविख्यात साहित्यकार श्रीमती चित्रा मुद्गल का सम्मान करते हुए अकादमी की पदाधिकारी सुश्री सुरेखा शर्मा एवं सरोज शर्मा

भूमंडलीकरण, बाजारवाद और हिन्दी अस्मिता

डॉ. लता अग्रवाल

भूमंडलीकरण और बाजारवाद के वर्तमान परिवेश में साम्राज्यवादी शक्तियाँ विकासशील राष्ट्रों की भाषा पर कुठाराघात कर रही हैं, जिससे न केवल भाषा की गरिमा को क्षति पहुँच रही है वरन इससे आँचलिक भाषाओं की अस्मिता भी विलुप्त होती नजर आ रही है। यही कारण है कि आज इन राष्ट्रों के समक्ष अपनी भाषा व संस्कृति की अस्मिता को लेकर बहुत बड़ी चुनौती आ खड़ी हुई है। भारत भी इससे अछूता नहीं क्योंकि यह विश्व का एक मात्र लोकतांत्रिक देश है जो बहुसंख्यक, बहुभाषी, बहुसंस्कृतिक और बहुजातीय है।

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा आयोजित हिन्दी प्रेमियों के एक सम्मेलन में 29 दिसम्बर, 1905 को बाल गंगाधार तिलक ने यह घोषणा की थी कि 'हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है।', यह घोषणा तब की थी जब सरकारी कार्यालयों में देवनागरी लिपि के प्रवेश मात्र के लिए किया आंदोलन सफल हुआ था। फिर न जाने कब और कैसे हिन्दी वोट की विभेदक राजनीति का शिकार हो गई। धीरे-धीरे हिन्दी के प्रति हमारा रवैया पराएपन का हो गया। हिन्दी अपने ही घर में बेगानी होकर रह गई। विदेशी भाषा ने अपने ही देश में उसके लिए कई चुनौतियाँ खड़ी कर दी। परिणाम आज हिन्दी के अस्तित्व को लेकर कई सवाल खड़े किए जा रहे हैं। विडम्बना की बात यह है कि हमने भी उन चुनौतियों के आगे हथियार डाल दिए और अपनी ही भाषा को लेकर समझौता कर लिया। हम भूल गए कि भाषा के प्रश्न पर किया गया समझौता स्वदेशी के उस भाव का तिरस्कार है जिसके जागरण ने देश को आजादी दिलाई। विश्व प्रेम के लिए सदैव दरवाजे खुले रखनी चाहिए यह ठीक है मगर निजत्व का विनाश कर परत्व को ग्रहण कर उसके रंग में रंजित होना मेरी दृष्टि में अनुकृति और स्वांग है। हिन्दी के साथ यही हुआ, हम भूल गए कि मौलिकता व्यक्तित्व और समाज के विकास की जीवन-शक्ति है ।

चाहे कोई भी भाषा हो भाषा का मूल आधार शब्द है, जो उस समाज की जरूरतों, आकांक्षाओं और सांस्कृतिक विशेषताओं के अनुरूप गढ़े जाते हैं। तब कहीं जाकर कोई भाषा आकार लेती है। चिंता का विषय है कि आज भाषा की वह संवेदना खोती जा रही है। भाषा के नाम पर न केवल अभिव्यक्ति का उथलापन दिखाई देता है बल्कि यह भाषा समाज की संस्कृति के लिए आतंक का जाल बुन रही है। जहाँ तक हिन्दी की बात है इंटरनेट के युग ने उसकी राह और भी मुश्किल कर दी है। जो हम हिन्दी की मूल लिपि को खोकर उसे रोमनलिपि में पहचान दिलाने का प्रयास कर रहे हैं। दुनिया की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि से समृद्ध इस भाषा को जो वैश्विक पहचान मिलनी चाहिए थी वह नहीं मिल पाई। न केवल हिन्दी बल्कि उसकी आबोहवा में पली हमारी अन्य उपभाषाओं और बोलियों पर भी औपनिवैशिक आक्रमण जारी है।

यह बात नहीं कि अँग्रेजी से हिन्द या हिन्दी को कोई परहेज है हिन्दी ने पहले भी तीन हजार के लगभग शब्द अँग्रेजी से ग्रहण किए है। किन्तु एक सीमा तक कोई भी नवाचार उचित होता है जब वह हमारी संस्कृति, भाषा और संस्कारों पर आ बने तो बात कुछ गंभीर चिंतन की हो जाती है। हिन्दी में अन्य विदेशी भाषाओं को शामिल करने से पूर्व हमें यह भी सोचना चाहिए कि हिन्दी की अपनी सगी संबंधी अन्य उपभाषाएं भी हैं जिनके बीच वह सदा से रहती आई है। बिना अपने परिवेश के विकास के कोई भी व्यक्ति, समाज राष्ट्र अथवा संस्कृति विकास नहीं कर सकती। जो लोग मानते हैं कि अँग्रेजी ने हिन्दी का हाजमा बढ़ा दिया है अथवा हिन्दी में अँग्रेजी के बघार ने हिन्दी को एक स्वादिष्ट और सुपाच्य बना दिया है तो यह उनकी खुशफहमी हो सकती है। जबकि हिन्दी अपने आप में एक सुसंस्कृत भाषा है संपूर्ण विश्व में उस जैसी मिठास कहीं नहीं। दरअसल हिन्दी का हाजमा सुधारने के चक्कर में अँग्रेजी हिन्दी पर हावी हो बैठी है। वर्तमान में हिन्दी का जो रूप सामने आ रहा है उसे हमने हिंगलिश का नाम दिया है, और सोचते हैं कि इससे भाषा संप्रेषण अच्छा होता है। किन्तु मेरा मानना है कि ये साजिश है बाजारवाद की आज उपभोक्तावादी प्रवृत्ति की मंशा यही है कि उपभोक्ताओं का विवेक कमजोर पड़े, ताकि लोगों के संस्कार बिगड़े। किसी देश के संस्कार बिगाड़ने के तमाम औजारों में एक हथियार यह भी है कि व्यक्ति की बोलचाल की भाषा बिगाड़ दी जाए। यही कारण है कि बाजारवाद की तमाम ताकतें आज हमारी भाषा को बिगाड़ने पर तुली हुई हैं। इस खेल को खेलने वाले नेपथ्य में बैठकर आनंद ले रहे हैं।

एक समय था जब भाषा का सारा दारोमदार परिवार, समाज व शैक्षणिक संस्थाओं पर हुआ करता था किन्तु आज यह पाठशाला मीडिया ने खोल रखी है। जिस तरह की भाषा वे आने वाली पीढ़ी तक पहुँचा रहे हैं वो भाषा के साथ किसी बलात्कार से कम नहीं। हिन्दी न्यूज चेनल भी इससे अछूते नहीं। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में विज्ञापनों की भाषा तो मानो अँग्रेजी की टकसाल से निकलकर आई है। हो भी क्यों न दिन भर स्कूल, कॉलेज और दफ्तर से खपा व्यक्ति और बच्चे अपने ड्राइंग रूम में टेलीविजन के सामने ही तो वक्त गुजारते हैं। यहाँ तक कि बच्चों का भोजन और गृहकार्य भी वहीं होता है। जहाँ टेलीविजन अपने आकर्षण भरे जज्बाती कार्यक्रमों से

उन्हें अपनी गिरफ्त में ले लेता हैं।

भाषा के साथ नवाचार में इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया दोनों में होड़ सी लगी है। सारी खबरों के अँग्रेजी शीर्षक देखने को मिलेंगे। 13 दिसम्बर 2006 को नवभारत टाइम्स में हिंग्रेजी की वकालात से आरंभ हुए इस नए शीर्षकों 'छात्र संघ पोल में नो पॉलिटिक्स', कॉटन को ऐसे करें केरी, आर यू स्मार्ट, समरनाइट में मिड नाइट का मजा, सुपर स्टार चिरंजीव की पोलटिक्स में नो एंट्री..। आज सभी अखबारों में यह क्रांति सी आई है। प्रश्न उठता है कि इस तरह के शीर्षक जैसा कि मीडिया की सोच है खबर को रोचक और बोधगम्य बनाते हैं, संभवत: मीडिया की खबरों को बिकाऊ होने में मददगार भी। मगर मेरी दृष्टि में ये भाषा की मूल पहचान को मिटाते हैं। क्या यह भाषा के साथ अविवेकी प्रयोग नहीं ? क्या वास्तव में भाषा का यह रूप संप्रेषण को सुगम और प्रभावी बनाता है ? क्या वास्तव में इनका कोई स्थानापन्न नहीं है ? पत्रिकाओं की बात करें तो हैल्थ खबरें, यूचर जान, फिटनेस फंडा, मैनेजमेंट फंडा जैसे स्तंभ आसानी से दिखाई देंगे। मानो अँग्रेजी में हिन्दी का छोंक लगा रहे हैं इस बात से अंजान कि यह खिचड़ी भाषा, भाषा के नाम पर फूहड़ प्रयोग है। हर शिक्षित वर्ग इस बात से परिचित है मगर सभी खामोश हैं, कारण आज यह भाषा हमारे रोजमर्रा के व्यवहार में किसी प्रकार की परेशानी खड़ी नहीं कर रही। संभवत: इसलिए हम इसे गंभीर मसला नहीं मानते।

उल्टे हम अपने गुनाहों की इस तरह पुष्टि कर रहें कि जो कुछ हो रहा है वह समय के प्रभाव से हो रहा है। अफसोस तो यह है कि यह दुर्व्यवहार न केवल हिन्दी के साथ है बल्कि ज्यों-ज्यों अँग्रजी का प्रभुत्व बढ़ रहा है त्यों-त्यों हमारी बोलियाँ लुप्त होती जा रही है। जबकि हिन्दी की सारी मिठास उसकी बोलियों में तो निहित है। आज पुन: कुछ धारावाहिकों में प्रादेशिक भाषाओं को स्थान मिला है जिससे लगता है ये आँचलिक भाषाएँ पुन: प्राणवायु पा रही हैं। फिर भी एक बात स्पष्ट कर देना चाहती हूँ कि यह भाषा प्रेम नहीं बाजारवाद है। एक धारावाहिक में इसके प्रयोग को प्रभावकारी देख अन्य धारावाहिकों के निर्माण की होड़ सी मच गई है। अत: आज हरियाणवी, पंजाबी, गुजराती, राजस्थानी, भोजपुरी, इलाहबादी बोली का रस दर्शक ले पा रहे हैं हम कह सकते हैं कि यह बाजारवाद के ही कारण संभव हो सका है। कि हिन्दी की ये उपभाषाएं प्राणतत्व पा रही हैं।

हम नहीं भूलना चाहिए कि हिन्दी की जड़ें इन आँचलिक बोलियों में ही समाहित है, बिना इनके हिन्दी का श्रृंगार अधूरा है। खटिया, माचिस, लुडिया, भेली, उखल, करघनी, गोना.... आदि शब्दों की अपनी मिठास है, अपना स्थान है जो कोई और भाषा नहीं ले सकती। वहीं हिन्दी की अपनी संपदा भी कम गरिमामय नहीं- आकाशवाणी, दूरदर्शन, प्रवक्ता, संस्मरण, रेखाचित्र गृहस्वामिनी,..... इत्यादि कर्णप्रिय हैं। आवश्यकता है इच्छाशक्ति और संकल्प की ऐसे शब्द और भी बनाए जा सकते हैं।

मगर हम तो समय के प्रवाह में बह रहे हैं जहाँ हर फर्म मालिक बाजार में अपनी घुसपैठ बनाने में जुटा है। दूसरे संपादक वर्ग भी संपादक कम प्रबंधक अधिक बना हुआ है। जो अधूरे ज्ञान के साथ इस महासमर में कूद पड़ते हैं। और जाने-अनजाने भाषा को क्षति पहुँचा जाते हैं। एक संपर्क भाषा के रूप में अँग्रेजी ठीक है, हम इसकी आलोचना नहीं करते। किन्तु जब सांस्कृतिक अस्मिता की बात आती है तो प्रश्न गहरा जाता है। हम भूल जाते हैं कि आज भी भारत में अधिकांश जनसंख्या ऐसी है जो हिन्दी भाषी है और हमारी अँग्रेजी प्रदत्त शिक्षा भारत के युवाओं की रचनात्मक प्रतिभा को कुंठित कर रही है। उच्च शिक्षा में अँग्रेजी दायित्व निर्वाह मात्र सरकारी स्तर पर होता है। इस अँग्रेजी माध्यम ने शिक्षा का पूरी तरह से व्यवसायीकरण कर दिया है आदर्श और मूल्य मानो पीछे कहीं छूटकर रह गए।

उच्च शिक्षा में हिन्दी माध्यम और हिन्दी को विषय के रूप में अनिवार्य करने के बजाय हमारी सरकार ने उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में हिन्दी को प्रायौगिक विषयों के साथ जोड़ते हुए ऐच्छिक विषय के रूप में रख दिया है। यथा- हिन्दी/अँग्रेजी सामान्य सी बात है कि आज का बालक कम्प्यूटर के एवज में भला हिन्दी क्यों पढ़ने लगा....? आखिर वह भी व्यवसायीकरण के प्रभाव से अछूता नहीं है। हिन्दी भारतीय संस्कृति की प्रमुख भाषा है जब तक हिन्दी व अन्य बोलियों के विकास और अस्मिता की रक्षा नहीं होगी, भारतीय संस्कृति, भारतीय भाषा, दर्शन और भारतीय युवाओं का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता।

जहाँ तक विदेशों में हिन्दी की प्रतिष्ठा और विश्व के परिदृश्य में हिन्दी अस्मिता का सवाल है तो संयुक्त राष्ट्र संघ की छह अधिकारिक भाषाओं में चीनी, स्पेनिश, अँग्रेजी, अरबी, रूसी और फ्रेंच हैं । जबकि हिन्दी विश्व की सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा में द्वितीय स्थान पर है। भाषिक आंकड़ों को यदि देखें तो हिन्दी की स्थिति कुछ इस प्रकार है-

1. चीनी (80 करोड़) 2. हिन्दी (55 करोड़) 3. स्पेनिश (40 करोड़) 4. अँग्रेजी (40 करोड़) 5. (20 करोड़) 6. रूसी (17 करोड़) 7. फ्रेंच (9 करोड़)

बेशक चीनी भाषा बोलने वालों की संख्या हिन्दी की अपेक्षा अधिक है। यदि हिन्दी का सर्वेक्षण उसकी तमाम उपभाषाओं के साथ किया जाय तो हिन्दी बोलने वालों की संख्या डॉ. नौटियाल

के अनुसार 1 अरब 10 करोड़ होकर हिन्दी विश्व की प्रथम भाषाओं के स्थान पर होगी। मगर विडम्बना यही है कि हिन्दी को सदैव उसकी सगी भाषाओं से हटकर देखा जाता रहा है।

अगर विश्व के मानचित्र पर हिन्दी की स्थिति को लेकर बात करें तो हमारे समक्ष जो परिदृश्य उपस्थित होता है वह इस प्रकार है-

■ अमेरिका में दो करोड़ से अधिक भारतीय मूल के लोग निवास कर रहे हैं हार्वड, पेन, मिशिगन, येल आदि विश्वविद्यालयों में हिन्दी का शिक्षण हो रहा है। लगभग 65 विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है। जहाँ हिन्दी का अध्ययन करने वालों की संख्या पन्द्रह सौ से अधिक है। हिन्दी को लेकर कई संस्थाएं कार्यरत हैं, बड़ी मात्रा में पत्र-पत्रिकाएं वहाँ से प्रकाशित भी हो रही हैं।

■ जापान के भारत से आध्यात्मिक जुड़ाव से सभी परिचित हैं। अपने धर्म संस्थापक भगवान बुद्ध की पावन मातृभूमि होने के कारण भारत के प्रति उनकी श्रद्धा सतत बनी हुई है। इसी से भारतीय साहित्य पढ़ने के प्रति उनकी रुचि ने हमारी कई रचनाओं का अनुवाद जापानी में कर हिन्दी को विस्तार दिया है। इतना ही नहीं हिन्दी के प्रति शोध को भी बढ़ावा दिया है। वहाँ लगभग साढ़े आठ सौ महाविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है। लगभग सोढ़े आठ सौ महाविद्यालयों में हिन्दी एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में पढ़ा जा रहा है तथा हिन्दू धर्म, पौराणिक कथाओं के साथ-साथ वहाँ के साहित्यकारों के प्रति जिज्ञासा उन्हें हिन्दी से जोड़े हुए हैं।

■ इंग्लैंड के कैम्ब्रिज, ऑक्सफोर्ड, लंदन, यार्क विश्वविद्यालयों में हिन्दी की पढ़ाई काफी समय से होती आ रही है। 2004-05 के स्कूली सर्वेक्षण में क्रमशः 180, 764, 711 बच्चों ने अपने को हिन्दी भाषी बताया। इसके अतिरिक्त कई हिन्दी संस्थाएं हैं जहाँ से पत्र-पत्रिकाएं सतत प्रकाशित हो रही हैं।

■ कनाडा में भी हिन्दी बोलचाल, शैक्षणिक तथा साहित्यिक भाषा के रूप में विस्तार पा रही है। वहाँ समय-समय पर हिन्दी कविता पाठ, गोष्ठियों जैसे कार्यक्रम आयोजित होते रहते हैं। साथ ही हिन्दी को लेकर कई प्रकाशन प्रतिवर्ष निकलते हैं।

■ मॉरीशस विश्व का एक मात्र ऐसा देश है जहाँ संसद ने हिन्दी के वैश्विक प्रचार के लिए और उसे संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना की है। 12 लाख आबादी वाले इस द्वीप में पाँच लाख हिन्दी भाषी हैं। मनोरंजन के साधान रेडियो, टेलीविजन आदि पर भी हिन्दी कार्यक्रमों को प्रधानता मिल रही है। लगभग 48842 छात्र हिन्दी पढ़ और सीख रहे हैं। लेखन की बात करें तो विदेश में सर्वाधिक व्यवस्थित लेखन मॉरीशस में ही देखने को मिलता है। लगभग 400 अध्यापक हिन्दी सेवा में रत हैं।

■ इटली में वेनिस, टूरिन, रोम, ओरिएंटल, मिलान विश्वविद्यालयों में 150 विद्यार्थी हिन्दी की पढ़ाई कर रहे हैं।

■ नीदरलैंड में सवा दो लाख भारतवंशी हैं वहाँ के चार विश्वविद्यालय में हिन्दी को लेकर गतिविधियाँ जारी हैं। साथ ही रेडियो, टेलीविजन आदि के माध्यम से हिन्दी का प्रचार-प्रसार जारी है हिन्दी के लिए एक अच्छा नेटवर्क तैयार है।

■ कोरिया के दो विश्वविद्यालय सियोल के हांकुक और बुशान के में हिन्दी विभाग अलग से निर्मित किए गए हैं, जहाँ लगभग पाँच-छः सौ विद्यार्थी हिन्दी अध्ययन करते हैं।

■ सूरीनाम में तो लोग हिन्दी संस्कृति में जीते हैं साहित्य और संस्कृति की रक्षा के साथ-साथ वहाँ हिन्दी बड़े ही सुंदर रूप में फल-फूल रही है, छः आकाशवाणी और चार दूरदर्शन केन्द्रों में विज्ञापनों से लेकर धार्मिक प्रचार, साक्षात्कार भी हिन्दी में किए जाते हैं।

■ पौलेंड में हिन्दी अध्यापन हेतु विश्वविद्यालयों में काफी मात्र में हिन्दी सामग्री उपलब्ध है इतना ही नहीं उन्होंने सूर, तुलसी और कबीर जैसे ख्यातिनाम कवियों के साहित्य का पोलिश भाषा में अनुवाद कर हिन्दी के इन दीप्तमान युगप्रवर्तकों को घर-घर पहुँचाने में यहाँ के साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है।

■ रूस से भारत का संबंध प्राचीन है जहाँ दो दर्जन संस्थाओं में डेढ़ हजार से अधिक रूसी छात्र हिन्दी का अध्ययन कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त रूस से लगभग आधा दर्जन से अधिक छात्र प्रतिवर्ष भारत आते हैं।

■ बुल्गारिया में तो न केवल हिन्दी वरन संस्कृत के प्रति भी अधिक रुचि और उत्साह देखने को मिला। वहाँ के सोफिया विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रति समर्पित प्राध्यापक हिन्दी की प्रगति हेतु अपना योगदान दे रहे हैं।

■ फीजी के बाजारों, गलियों में हिन्दी की धारा स्वतंत्र रूप से बह रही है। वहाँ हिन्दी भाषा साहित्य एवं संस्कृति के उद्‌भव एवं विकास में विद्वानों के साथ-साथ वहाँ का श्रमिक समाज भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। वो जो भी टूटी-फूटी हिन्दी जानते हैं उसी से भजन, कीर्तन, रामायण पाठ जैसी भारतीय परंपराओं को जीवित बनाए हुए हैं। वे जन्माष्टमी, दशहरा, रामनवमी, होलिका दहन जैसे त्योहारों को पूर्ण श्रद्धा से मनाकर हिन्दू संस्कृति की रक्षा करते हैं।

■ फिनलैंड के हेलसिंकी, स्वीडन के स्टॉकहोम विश्वविद्यालय, डेनमार्क के कोपेनहैगन विश्वविद्यालय, के साथ ही

नार्वे में भी में हिन्दी की स्थिति दिन-प्रतिदिन सुदृढ़ होती जा रही है। 46 लाख आबादी वाले इस देश में 7 हजार भारतीय है जो प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय, तक शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। हिन्दी चैनलों की यह श्रृंखला, जी.टी.वी. सोनी, सिनेमा, बी.फार.यू. मूवी, एम. टी. से आरंभ होकर 146 देशों तक पहुँची है।

■ चीन और भारत का तो प्राचीन संबंध है ही, वे भारतीय जीवन पद्धति दर्शन तथा बौद्ध मत से काफी प्रभावित हैं। वहाँ के प्रो. चिनहान व प्रो. ची. श्येन ने क्रमशः रामचरित मानस व बाल्मीकि रामायण का चीनी में अनुवाद किया इसके साथ ही कई नवीन महत्वपूर्ण साहित्यकारों की रचनाओं को भी हिन्दी से चीनी में अनुवाद किया । हाल ही के वर्षों में चीनी में हिन्दी के प्रति तेजी से रूझान बढ़ा है, इसके पीछे भी आर्थिक उदारीकरण एवं भूमंडलीकरण का प्रभाव है।

■ उसी तरह भारत और नेपाल के बीच सांस्कृतिक, सामाजिक संबंध काफी पुराने हैं, यहाँ से प्रकाशित होने वाली पत्र-पत्रिकाओं, प्राथमिक पाठशाला से लेकर विश्वविद्यालय तक हिन्दी शिक्षा हेतु किए गए प्रयास बताते हैं कि विदेशों में तो हिन्दी अपने को मजबूती के साथ स्थापित किए हुए है।

इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि विदेशों में हिन्दी की स्थिति काफी सुदृढ़ बनी हुई है, अगर कहीं समस्या है तो वह अपने ही देश में अपनी ही भाषा की उपेक्षा से है। पीड़ा इस बात की है कि बाजारवादी कंपनियाँ तो भली-भांति जान गई हैं कि आज भारत में बाजार के विकास की बड़ी संभावनाएं हैं। यदि यहाँ व्यापार के क्षेत्र में अपनी जड़ें जमाना है तो हिन्दी को जानना और समझना बहुत आवश्यक है। इसके लिए वे अपने तौर पर प्रयास कर रही हैं। वह भी अँग्रेजियत को बरकरार रखते हुए। किन्तु सबसे बड़ी विडम्बना है कि हिन्दी विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की भाषा है। यह भी सच है कि हिन्दी बोलने वाले विश्व में बड़ी मात्र में हैं। यहाँ तक कि प्रवासी भारतीयों की सांस्कृतिक भाषा भी हिन्दी है। फिर क्यों हिन्दी को इन चुनौतियों से गुजरना पड़ रहा है। हिन्दी ने अपना वर्चस्व अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका, एशिया महाद्वीपों के तिरानवे देशों में फैला रखा है। विदेशों से यात्री हिन्दी सीखकर हमारे देश में आते हैं और हिन्दी बोलकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते हैं। दूसरी और हम हैं कि अँग्रेजी झाड़कर स्वयं में अभिमान महसूस करते हैं। जो भाषा विश्वभाषा बनने की राह में अग्रसर है वह अपने ही देश में राष्ट्रभाषा बनने से वंचित है। यह हमारे लिए खेद का विषय है कि हिन्दी के दामन में सबसे अधिक जख्म उसके अपनों ने ही दिए है।

हमारे प्राथमिक स्कूल हों या फिर विद्यालय, विश्वविद्यालय, सरकारी दफ्तर हो या भारतीय दूतावास हिन्दी के प्रति सबका रवैया उपेक्षापूर्ण ही रहा हैं। हिन्दी विश्व के जिस भी कोने में पहुँची है अपने स्वयं के प्रयासों से ही पहुँची है। भूमंडलीकरण के दौर में टी.वी. चैनल, हिन्दी फिल्में, दूरदर्शन, समाचार पत्र-पत्रिकाएं, इसमें महत्ती भूमिका निभा रहे हैं। हिन्दी की लोकप्रियता के रहते ही डिस्कवरी, नेशनल, ज्योग्राफी चैनल, विदेशी फिल्में, कार्टून शो, धारावाहिक आदि भी हिन्दी में आ रहे हैं परन्तु न जाने क्यों हिन्दी के प्रति हमारी सरकार का रवैया ढुलमुल ही रहा है ।

एक ओर सरकार कहती है हम जनता के सेवक हैं जब सेवक ही स्वामी की भाषा को नहीं जानेंगे तो इससे बड़ी दुखद स्थिति और क्या होगी ? एक समय था जब भारत में साहित्य, धर्म, विज्ञान, गणित और राजनीति जैसे विषयों पर ज्ञान पाने हेतु विदेशियों की भीड़ लगी रहती थी। आज वही भारत ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में परमुखापेक्षी बना हुआ है। इतना ही नहीं इन क्षेत्रों में हम उन्हीं की नकल कर रहे हैं। क्या कभी चिंतन हुआ... कि आखिरकार यह स्थिति क्यों कर बनी...? पूरे विश्व के केन्द्र में रहकर सभी को विचारों की रोशनी से दीप्त करने वाला भारत आज विश्व की धुरी पर घूम रहा है....? क्योंकि हमने अपनी भाषा में चिंतन करना ही छोड़ दिया है। जब हमारी सोच ही मौलिक नहीं होगी तो मौलिक विचारों की कामना व्यर्थ है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि हिन्दी देश को परस्पर जोड़े रखने वाली भाषा है इसकी सहायता से पूरब से लेकर पश्चिम तक उत्तर से लेकर दक्षिण तक लोग विचार-विमर्श करते आए हैं। हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि हिन्दी ही नहीं समस्त भारतीय भाषाओं में, भारतीय आत्मा छिपी है, अस्मिता छिपी है, हमारा स्वाभिमान और गौरव छिपा है। दुख है कि आज हमारे दैनिक जीवन के तमाम क्रियाकलापों में विदेशी सोच का वर्चस्व बना हुआ है। इससे न केवल हमारे संस्कार दूषित हो रहे हैं बल्कि हमारी भाषाएं उपेक्षित हो रही हैं। आज पुनः आवश्यकता है भाषायी स्वाभिमान को जगाने की। हिन्दी की उपेक्षा देश की उपेक्षा है, प्रगति की अवहेलना है। हिन्दी पर किया जाने वाला व्यय एक औपचारिकता है। वास्तव में जब तक इसे मौलिक चिंतन की भाषा बनाकर उसे प्रतिष्ठित करने का संकल्प हम नहीं लेंगे, देश के व्यक्तित्व में नैसर्गिक सौंदर्य और पुष्टि नहीं आएगी। इसके लिए आवश्यकता किसी सभा अथवा आयोजन की नहीं बल्कि आवश्यकता है श्रद्धा और विश्वास की।

-डॉ. लता अग्रवाल
हिन्दी प्राध्यापिका
73 'यशविला', भवानी धाम फेस-1, नरेला शंकरी
भोपाल-462041

अक्षुण्ण रहेगी हिन्दी की अस्मिता

भाषा भावों की संवाहिका और अभिव्यक्ति का श्रेष्ठतम माध्यम है। इसी के द्वारा हम अपने विचारों को सम्प्रेषित कर पाते हैं। बिना भाषा के विचारों का प्रकटीकरण संभव नहीं है। भाषा ही तो सब कुछ है। इसीलिए इतिहास के सजीव पृष्ठों पर भाषा के माध्यम से सत्य का उत्स है। आज यही कारण है कि विश्व की पराजित भाषाएँ अपनी-अपनी देशी अस्मिता बनाये रखने के लिए संघर्ष करती दिखाई दे रही है। इस संघर्ष की छटपटाहट को दुनिया के अनेक छोटे-छोटे देशों में देखा जा सकता है। अपने देश के स्वाधीनता संग्राम और आन्दोलन का आधार हिन्दी भाषा थी। इसी के माध्यम से ही इतने महान संग्राम को जीतना संभव हो सका। स्वतंत्र भारत में डॉ. राम मनोहर लोहिया ने अंग्रेजी हटाओ, हिन्दी लाओ के आन्दोलन का सूत्रपात किया था। उनके समस्त प्रयासों के बाद भी दुर्भाग्यवश, भारत को उस औपनिवेशिक शक्तिशाली मानसिकता से मुक्त करना संभव नहीं हो सका, जिसमें अंग्रेजी को जानना ही विद्वता की निशानी माना जाता है।

दुर्भाग्यवश वर्तमान स्थिति इतनी संवेदनशील है कि भाषा के प्रश्न को गैर राजनीतिक ढंग से सोचना ही संभव नहीं प्रतीत होता है। हिन्दी हमारी संस्कृति में रची बसी है, रगों-रगों में घुली-मिली हुई है। यह एक विशाल समाज की भाषा है। बहुसंख्यक नागरिकों से सम्पर्क के लिए हिन्दी अनिवार्य है। इसीलिए अपने देश में स्विस बहु-राष्ट्रीय कम्पनी हिन्दी सिखाने का व्यवसाय कर रही है। इसके अतिरिक्त अमेरिका सहित यूरोप के कई देश हिन्दी भाषा सिखाने का प्रयास कर रहे हैं। यही कारण है कि टेलीविजन पर विदेशी चैनल भी हिन्दी भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। आखिरकार उन्हें अपने उत्पाद के तकनीकी महत्व, जरूरी सूचनाएँ, उत्पादों का विज्ञापन हिन्दी भाषी लोगों के बीच में ही करना है। यह हिन्दी भाषा के महत्व को रेखांकित करता है।

हिन्दी कई राज्यों की भाषा है, जैसे मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड, उत्तराखण्ड, राजस्थान, दिल्ली आदि। इनका प्रशासनिक कार्य हिन्दी के माध्यम से ही चलता है। इस सत्य के बावजूद लोगों का अंग्रेजी के प्रति आकर्षण कम नजर नहीं आता है। इसे अंग्रेजी के प्रति विवशता कहें या आकर्षण आज यह भाषा हिन्दी से अधिक सशक्त बन गयी है। लोगों को लगता है कि उनका बच्चा यदि अंग्रेजी नहीं जानता है तो फिर यह कितना भी प्रतिभावान क्यों न हो, सफल नहीं हो सकता। इसीलिए शिक्षा के निजी क्षेत्रों में अंग्रेजी माध्यम का स्कूल चलना एक बेहद लाभकारी व्यवसाय बन चुका है जिसमें अब बड़े-बड़े उद्योगपति भाग ले रहे हैं। इसलिए अंग्रेजी के प्रति यह प्रेम, हिन्दी की उपेक्षा को स्पष्ट दर्शाता है। भारतीय समाज को देखकर शंका होती है कि क्या हम सचमुच हिन्दी के समर्थक है या हम ऐसा होने का महज ढोंग करते हैं। हमें अपनी क्यारी के प्राकृतिक फूल अच्छे क्यों नहीं लगते हैं? हम प्लास्टिक या कागजी फूलों की कृत्रिमता को क्यों अपने गले का हार बना रहे हैं?

यह सर्वविदित सत्य है कि इतिहास के हर कालखण्ड में भाषा, सत्ता की मुखपेक्षी रही है। कभी हमारे देश की प्रमुख भाषा संस्कृत रही है परन्तु जैसे ही वह कालखण्ड समाप्त हुआ और सत्ता मुगलों के हाथों आयी तो फारसी का वर्चस्व बढ़ गया। लार्ड मैकाले जैसे चतुर चालाक कूटनीतिज्ञ ने बड़ी ही चतुराई से षड्यंत्र करके अंग्रेजी को सभ्य एवं सम्प्रति लोगों की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। वह यह सिद्ध करने में सफल हो गया कि अंग्रेजी जानना सभ्यता की निशानी है और हमारी गुलाम मानसिकता इस षड्यंत्र का पर्दाफाश नहीं कर पायी और यही कारण है कि हम आज भी भाषा की गुलामी की चादर ओढ़े हुए हैं। जब एक राष्ट्र का एक झण्डा होता है, एक राष्ट्रीय पक्षी होता है, एक राष्ट्रगान होता है तो एक भाषा क्यों नहीं है? प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी वन नेशन, वन इलेक्शन की झण्डाबरदारी करते हैं तो यह क्यों भूल जाते हैं कि एक राष्ट्र की एक राष्ट्रभाषा भी होनी चाहिए।

अंग्रेजी भाषा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुप्रचारित भाषा है और विश्व भर में भ्रमण, व्यापार, शिक्षा, संचार आदि के क्षेत्र में इसका लाभ मिलता है। अंग्रेजी भाषा इस साम्राज्यवादी बाजार की भाषा है जिसका सारा काम अंग्रेजी माध्यम से होता है। साम्राज्यवादी अपने उपनिवेशों में अपनी भाषा और संस्कृति को थोपने का प्रयास करते हैं क्योंकि उन्हें मालूम है कि आधुनिक युग में किसी भी राष्ट्र को शक्ति या सैन्यबल के द्वारा गुलाम नहीं बनाया जा सकता है परन्तु भाषा एवं संस्कृति की मानसिक दक्षता सदियों तक चल सकती है जैसेकि हमारे देश में अंग्रेजी के प्रति चल रही है। अंग्रेजी का प्रभाव तो अंग्रेजों के रहते भी इतना नहीं था जितना कि स्वतंत्र भारत में दिखायी दे रहा है।

हिन्दी हमारी मातृभाषा है और इस भाषा के प्रति हमारे मन में लगाव होना चाहिए। अपनी भाषा तो भावनात्मक रूप से हमारे मन में बसनी चाहिए। षड्यंत्र के द्वारा हो सकता है कि थोड़ा बहुत व्यतिक्रय आ जाये परन्तु यह स्थिति देर तक नहीं ठहरने वाली है और न चलने वाली है। इसीलिए निकट भविष्य में हिन्दी भाषा की अस्मिता को नष्ट कर जिस अंग्रेजी भाषा को वरीयता दी गयी है, उसे टूटना ही है। पुनः हिन्दी की प्रतिष्ठा होगी, भले समय लग जाये। क्योंकि राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है-

किन्तु विमाता बन विदेश की
कोई माता आयेगी
तो वह यहाँ पूतना की गति
आप अन्त में पायेगी।

-डॉ. एस. आनन्द

हिन्दी का सफर कहाँ तक ?

श्रीमती आशा शैली

कभी-कभी हम भयभीत से हो जाते हैं यह सोचकर कि बदलते हुए सामाजिक परिवेश में हमारी हिन्दी कहीं पिछड़ तो नहीं रही ? सम्भवतया इसमें आंग्ल भाषा का प्रभाव भी शामिल हो, किसी हद तक हिन्दी का स्वरूप बिगाड़ने का दायित्व आम बोल-चाल में इंगलिश का दखल भी है जिसे हम आज हिंग्लिश कहने लगे हैं । हिन्दी को रोमन में लिखना भी एक तरह की निराशा पैदा करता है परन्तु वह मात्र मोबाइल तक सीमित है, इसलिए अधिक परेशान नहीं करता । हाँ बोलने में आंग्ल भाषा का अधिक प्रयोग किसी तरह से भी हितकर नहीं कहा जा सकता । वर्तमान परिपेक्ष में नयी पीढ़ी को जब हम अंग्रेजी पर आश्रित और निर्भर देखते हैं तो मन में एक टीस-सी उठती है । यहाँ हम निरुपाय से बस देखते रहने के लिए विवश हैं। मैकाले का षड़यन्त्र सफल हुआ। आज उसकी नीति सफल होकर कहीं बहुत गहरे पैठ गई है और इस षड़यन्त्र का शिकार हुए हम भारतवासी चाहकर भी अपनी भावी पीढ़ियों को हिन्दी की ओर उन्मुख नहीं कर पा रहे। लगता है आज हिन्दी लिखना-पढ़ना लोगों से छूट रहा है । हाँ यह अवश्य है कि घर में यदि हिन्दी बोली जाती है तो भावी पीढ़ी हिन्दी सीखेगी ही परन्तु संभ्रांत कहे जाने वाले घरों में बातचीत का माध्यम अंग्रेजी ही हो गई है । मध्यम और निम्न मध्यम वर्ग में भी हिन्दी किसी हद तक मौखिक होकर रह गई है।

मैं उत्तराखण्ड के जिस भाग में रहती हूँ वहाँ राष्ट्रीय सेवक संघ का प्रभाव अधिक है, बहुत सारे घरों के बच्चे शाखा में जाते हैं। उस पर भी बच्चे अंग्रेजी माध्यम स्कूलों के कारण हिन्दी की गिनती तक नहीं जानते। मैं स्वयं पंजाबी भाषी क्षेत्र से हूँ। मेरा जन्म अविभाजित पंजाब में हुआ और अभी तक हमारे घरों में पंजाबी बोली भी जाती है फिर भी हिन्दी का प्रभुत्व बना हुआ है। हालांकि आज की नई पीढ़ी के बच्चे हिन्दी बोलते अवश्य हैं यह किसी हद तक हमारी पीढ़ी का दबाव भी हो सकता है क्योंकि साधारणतया घरों और गली बाजारों में हिन्दी बोली जाती है परन्तु लिखने-पढ़ने के नाम पर नई पीढ़ी के बच्चे वही अंग्रेजी ही जानते समझते हैं। एक समय था जब अक्सर सुना जाता था कि दक्षिण भारत में हिन्दी का विरोध बहुत मुखर है। परन्तु आज वह स्थिति नहीं है। इसका कारण सम्भवतया रोजगार भी है। बहुत सी सरकारी, गैर-सरकारी संस्थाओं में दक्षिण भारतीय लोग उत्तर भारत में नौकरी के लिए आ रहे हैं, इसी प्रकार उत्तरी भारत के लोग दक्षिण में नौकरी कर रहे हैं। ऐसे में राजनीतिक पैंतरेबाजी के बाद भी भाषा के विस्तार पर अंकुश रखना कठिन हो जाता है और इसका लाभ हिन्दी को भरपूर मिल रहा है। दक्षिण के हर राज्य में हिन्दी प्रचार के लिए सरकारी संस्थाएँ हैं और वे अपना काम भी कर रही हैं, फिर भी यह कोई बहुत उत्साहवर्धक स्थिति नहीं है तो निराशाजनक भी नहीं। काम हो रहा है, कुछ न होने से कुछ होना बेहतर हैं।

हाँ यह अवश्य है कि हमें और मेहनत करनी पड़ेगी। हिन्दी का फलक बहुत विस्तृत है। हिन्दी धीरे-धीरे जाग रही है। यहाँ केवल मैकाले को कोसने से काम नहीं चलने वाला। हमारी इस दुखद स्थिति के उत्तरदायी हमारे नेतागण भी रहे हैं, जिन्होंने सब कुछ जानते-बूझते हुए भी हिन्दी को रोजगार से नहीं जोड़ा। स्थिति दुखद तो है परन्तु एकदम निराशाजनक भी नहीं है, क्योंकि तनिक समझ विकसित होते ही हमारे बच्चे हिन्दी की ओर उन्मुख होने लगते हैं पर ये सारी परिस्थितियाँ मध्यम और निम्न मध्यमवर्ग के लिए ही हैं। उच्च और उच्च मध्यम वर्ग तेजी से न केवल आंग्ल भाषा का अनुसरण कर रहा है अपितु पाश्चात्य संस्कृति की ओर भी भाग रहा है यही सबसे बड़ी समस्या है, क्योंकि यथा राजा तथा प्रजा की उक्ति के अनुसार मध्यम और निम्न वर्ग इसी उच्च वर्ग को अपना आदर्श मानकर इनके पीछे चलता है। ऐसे में जो लोग या संस्थाएँ हिन्दी के लिए काम कर रहे हैं उन्हें साधुवाद और प्रोत्साहन देना आवश्यक है। हमारे समाज की तेजी से बदलती दशा और दिशा जहाँ अंग्रेजी भाषा पर निर्भर होती देखी जा रही है वहीं एक सुखद बयार के झोंके-सा सीमापार के देशों में बढ़ता हिन्दी क्षेत्र मन को आश्वस्त भी करता है। कहीं कानों में कोई कहता है कि 'अभी सब कुछ समाप्त नहीं हुआ है।' ऐसा ही एक झोंका मैंने कुछ वर्ष पूर्व महसूस किया था जब उत्तराखण्ड के वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक' के आयोजन में हिन्दी के लगभग 70 ब्लॉगर खटीमा, उत्तराखण्ड में एकत्र हुए। उस समय मुझे पता चला कि हजारों की संख्या में हिन्दी ब्लॉगर काम कर रहे हैं। इतना ही नहीं नए बच्चे जब हिन्दी साहित्य में उतर रहे हैं तो हिन्दी साहित्य की गहराई तक जाने के लिए उन्हें हिन्दी सीखनी भी पड़ती है। इस दिशा में वट्सएप और फेसबुक भी सहायक हो रहे हैं। नेट को कोसने वालों की भी कमी नहीं है पर सच तो यह है कि जिसे जो सीखना है वह सीख ही लेगा। यानि जिसे जिस चीज की तलाश है वह मिल ही जाएगी। आज यदि पुस्तकें नहीं पढ़ी जा रहीं तो उससे भी अधिक नेट पढ़ा जा रहा है। अर्थात पढ़ने की प्रवृति बढ़ी है। ऐसे में पुस्तकों का महत्व भी लोगों की समझ में आ रहा है। भाषाओं के विस्तार और आदान-प्रदान के लिए पर्यटन भी बहुत सहयोगी होता है । इतिहास गवाह है कि हर बड़ा लेखक पर्यटन से जुड़ा रहा है, अर्थात् घुमक्कड़ रहा ही है। भारत विविधताओं का देश है और पर्यटन की अपार संभावनाएँ यहाँ विद्यमान हैं । बहुत से विदेशी छात्र यहाँ

अध्ययन के लिए भी आते हैं और भारत में रहकर वे हिन्दी न सीखें यह हो ही नहीं सकता। इतना ही नहीं आज हिन्दी के महत्व को समझते हुए विदेशों की सरकारें भी अपने यहाँ हिन्दी पढ़ाने लगी हैं। हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के गुजराती कविता संग्रह का हिन्दी अनुवाद सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती अंजना संधीर नेकिया तो बहुत से अन्य अनुवाद दूसरी भाषाओं से हिन्दी में और हिन्दी से अन्य भाषाओं में हो रहे हैं।

इससे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से हिन्दी का विस्तार तो हो ही रहा है, हिन्दी साहित्य के भण्डार की श्रीवृद्धि भी निरंतर हो रही है। श्रीमती अंजना संधीर जहाँ पाँच वर्ष तक अमेरिका में हिन्दी पढ़ाती रही हैं तो वहीं डॉ. यास्मीन सुल्ताना नकवी जैसे विद्वान जापान में अपने वर्षों के कार्यकाल में हिन्दी के सैकड़ों विद्यार्थियों को पारांगत करके आए हैं और आज भी कर रहे हैं। वर्तमान में बिड़ला फाउंडेशन के निदेशक सुरेश तुपर्ण भी जापान में हिन्दी पढ़ा चुके हैं। कहना न होगा कि प्रत्येक देशमें आज हिन्दी पढ़ाई जा रही है। कारण चाहे जो भी हो हमें और हमारी भाषा को सीधा लाभ मिल रहा है। हालांकि भारतीय सभ्यता की जड़े जहाँ बहुत गहरी हैं, वहीं हिन्दी का इतिहास बहुत पुराना नहीं है, फिर भी भारतीय सभ्यता के दीवाने बहुत लोग हैं। उन्हें भारतीय सभ्यता से जोड़ने का काम तो हिन्दी ही करेगी।

आपको जानकर आश्चर्य होगा कि इण्डोनेशिया, कम्बोडिया ही नहीं सम्पूर्ण दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में भारतीय सभ्यता के अवशेष देखे जा रहे हैं और वहाँ के अध्ययनशील छात्र अपनी जड़ों की ओर लौटने का प्रयास कर रहे हैं। यह सच है कि विदेशों में हिन्दी भाषा का प्रभाव बढ़ रहा है। अकेले कम्बोडिया में ही अगणित ऐसे छात्र-छात्राएँ हैं जिन्हें भारत और हिन्दी से असीम प्यार है। पर बिडंम्बना यह है कि हम तो अपने बच्चों को बड़ी मेहनत से अंग्रेजी सिखाने में लगे हुए हैं। विद्वानों का कहना है कि यदि भारत की सरकारें संवेदनशील होतीं तो सांस्कृतिक एकता के कारण सम्पूर्ण दक्षिण पूर्व एशिया देश भारत के साथ एकजुट होते। जैसे यूरोपीय देश एकजुट हैं। हमारे पूर्वज हमें यह विरासत देकर गये हैं। पर हमारा देश तो सैक्युलर था उसने इन देशों के प्रति उदासीनता दिखाई। इन देशों में भारत के प्रति असीम अनुराग है। यहाँ का जनसामान्य अपनी संस्कृति की जड़ें भारत में देखता है। कम्बोडिया, थाईलैंड, लाओस, इन्डोनेशिया, वियतनाम बर्मा, फिलिपीन्स आदि भारतीयता में रंगे हुए देश हैं। चूंकि यहाँ के लोगों को संस्कृत भाषा से गहन अनुराग है। इन लोगों की भारत के सांस्कृतिक प्रतीकों की जानकारी अद्‌भुत है। यह विष्णु, शिव, गंगा, गरुड़ आदि सभी से गहराई से परिचित हैं पर भारत में तो धर्मनिरपेक्षता का अर्थ संस्कृति विहीनता समझा गया। परिणाम सामने है। बूंद-बूंद से ही घट भरता है। अत: यहाँ हर इकाई का योगदान महत्वपूर्ण है। हमारे आस-पास बहुत से विद्वान हिन्दी में ब्लॉग पर काम कर रहें हैं इन विद्वानों में डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक' शिखर पर रहे हैं। इनका हिन्दी ब्लॉग 'उच्चारण' आज भी यथावत काम कर रहा है। डॉ. सिद्धेश्वर का 'कर्मनाशा' ब्लॉग काम कर रहा है। शेफाली पाँडे और ऐसे बहुत से नाम हैं। मैंने अभी तक ब्लॉग पर काम नहीं किया परन्तु इसके महत्व से इनकार भी नहीं कर सकती । मूलत: पंजाबी भाषी होते हुए मैंने पंजाबी में बहुत कम लिखा है। हालांकि मैंने उर्दू, डोगरी महासवी बोलियों में भी लिखा है। परन्तु मेरा अधिक काम हिन्दी में ही है। यहाँ मैं यह भी कहना चाहूँगी कि यदि हमें हिन्दी के बारे में सोचना है और उसे विश्व-व्यापी बनाने की इच्छा है तो अन्य भाषा भाषियों से अपेक्षा न रखकर स्वयं पहल करनी होगी। मैंने ओड़िया सीखकर ओड़िया से हिन्दी में काव्यानुवाद किया है। हमारे लिए प्रसन्नता की बात यह भी है कि वर्तमान में सरकारी कार्यालयों में भी हिन्दी में काम होने लगा है। कोई चाहे तो वह सारा काम हिन्दी मेंकर सकता है और यदि कोई कार्यालय इसमें लापरवाही बरतता है तो उसकी शिकायत भी की जा सकती है। हिन्दी को विशाल फलक दिलाने में जहाँ सिनेमा के योगदान को जाना जाता है वहीं इस दिशा में प्रवासी भारतीय साहित्यकारों का योगदान भी कम नहीं है। विदेशों में बसे हमारे रचनाकार अपने-अपने तरीके से हिन्दी को आगे बढ़ा रहे हैं। वे जहाँ भी रह रहे हैं, वहाँ की भाषाओं के अतिरिक्त हिन्दी में भी निरंतर लिख रहे हैं। इससे हिन्दी का फलक विस्तार पा रहा है।

-आशा शैली
सम्पादक, शैल-सूत्र, इन्दिरा नगर-2,
लाल कुआँ, जिला-नैनीताल, उत्तराखण्ड-262402

अंग्रेजी सीखकर जिन्होंने विशिष्टता प्राप्त की है,
सर्वसाधारण के साथ
उनके मत का मेल नहीं होता ।
हमारे देश में सबसे बढ़कर
जातिभेद वही है,
श्रेणियों में परस्पर
अस्पृश्यता इसी का नाम है ।

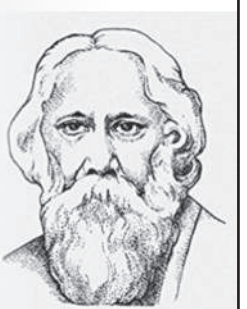

-रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अहो ! हिन्दी दुर्दशा देखी न जाए

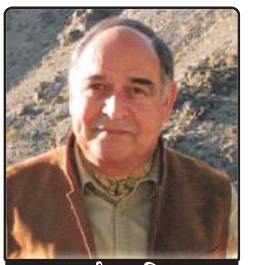
सुदर्शन वशिष्ठ

हाँ, चौदह सितम्बर 1949 का ही वह दिन था, जब संघ के संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा नहीं, 'राजभाषा' का दर्जा दिया गया। मेरा जन्म चौबीस सितम्बर को हुआ, इस घटना के ठीक दस दिन बाद। तो मेरे जन्म से दस दिन पहले, कहते हैं, हिन्दी की राजभाषा के रूप में विजय एक मत से हुई। भारत के संविधान में इसकी व्याख्या की गई और 'क' वर्ग में हिन्दी पट्टी में अर्थात् हरियाणा, हिमाचल, दिल्ली, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान तथा संघ शासित प्रदेश शामिल हुए। इसमें दुखद बात यह है कि बहुत से हिन्दी के विद्वान व पढ़े लिखे लोग भी यह नहीं जानते कि संविधान में हिन्दी "राष्ट्रभाषा" नहीं "राजभाषा" है। सौभाग्य से मेरा जन्म भी 'क' प्रदेश में हुआ। बी.ए. में हिन्दी ली तो हम दो ही लड़के थे, शेष तीस पैंतीस लड़कियां ही लड़कियां। दोस्त मजाक उड़ाते। इससे बचने के लिए मैं उनके साथ पॉलिटिकल की क्लास में बैठा रहता। हाँ, हिन्दी में एम.ए. करना फलित हुआ। नौकरी भाषा विभाग में मिली। खूब 'हिन्दी-हिन्दी' खेल खेला। हिन्दी के राजभाषा बनने का एक नोट मेहनत से तैयार किया जो हर वर्ष हिन्दी दिवस पर काम आता। सन् बदल कर उसे हर साल नये मुख्य अतिथि को भेज दिया जाता। कोई ध्यान न दे तो सन् भी वही रहता। हिन्दी को संघ ने राजभाषा तो माना, मगर बोला कि अंग्रेजी भी साथ-साथ चलेगी। हुआ उल्टा, अंग्रेजी साथ-साथ न चल कर आगे बढ़ गई, हिन्दी पीछे हो गई। विभागों के हिन्दी नाम रोमन में लिखे जाने लगे। अंग्रेजी का साथ नहीं छूटा। संविधान ने बार-बार अंग्रेजी के साथ को सहचरी की तरह बढ़ाया । अंग्रेजी ने तो आगे होना ही था, सो स्कूलों से ही नींव पक्की होने लगी। पब्लिक स्कूलों में हिन्दी बोलने पर 'केनिंग' होने लगी जहां हिन्दी प्रेमियों के बच्चे शिक्षा ग्रहण कर रहे थे।

हाँ, हिन्दी के राजभाषा बनने पर फायदे भी हुए। केन्द्र सरकार के सभी मंत्रालयों व विभागों में, बैंकों में, हिन्दी राज्यों में, राजभाषा विभाग बने और 'हिन्दी अधिकारियों' के पद सर्जित हुए। हिन्दी, जो कभी रत्न भूषण के माध्यम से केवल लड़कियों का ही विषय हो गया था, लड़कों को भी आकर्षित करने लगा। हिन्दी सेवी राजभाषा या हिन्दी अधिकारी बनने लगे। बैंकों में तो ऐसे अधिकारियों को अच्छा ग्रेड भी दिया गया। संसदीय राजभाषा समिति के साथ केन्द्र के सभी विभागों में राजभाषा समितियां बनीं जिनमें कहीं-कहीं एकाध हिन्दी के साहित्यकार को भी सदस्य बनने का गौरव प्राप्त हुआ। संसदीय राजभाषा समिति के साथ-साथ यह सभी समितियां गर्मियों में पहाड़ों पर हिन्दी के निरीक्षण हेतु दौरे पर आने लगीं। भाषा के साथ 'राज' भी तो लगा है। बैंकों में तो इन समितियों के ठाठ ही अलग हैं। राजभाषा के उत्थान के लिए कुछ संस्थाएं बनीं जो वर्ष में एक दो 'अखिल भारतीय सेमिनार' करवाने लगीं। कुछ पहुँच वाली संस्थाओं ने हिन्दी को पंच सितारा होटलों तक पहुंचाने का बीड़ा उठाया। ऐसी संस्थाएं केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के निगम, बोर्डों से उनके खर्चे पर और फीस ले कर प्रतिनिधि बुलाने लगीं । पंचसितारा होटलों में सेमिनार, साथ में घूमने घुमाने का जिम्मा। डेलिगेट सपरिवार होटल में आते ही पर्यटक स्थलों की जानकारी लेकर प्लान कर लेते। सरकारी विज्ञापन से सजी स्मारिका और हर सत्र में कोई न कोई मंत्री अध्यक्ष। चौदह सितम्बर के लिए नामी गरामी लेखकों की बुकिंग भी होने लगी। कुछ अध्यक्ष, कुछ वक्ता। साठ पैंसठ के बाद स्थायी अध्यक्ष बने लेखक डकारते हुए कहते सुने जाते: "भईया! हम कमिट कर चुके हैं। आपने पहले नहीं बताया न। स्टील अथारिटी वाले बाई एयर बुलाए रहे हैं। बुकिंग भी करवा दी ससुरों ने.... अरे! अगली बार सही। यह कौन कुम्भ का मेला है जो बारह बरस बाद ही आएगा।"

लेखक और खासकर कवि तो नवरात्र और श्राद्ध की तरह नये-नये धोती कुरते निकाल ऐसे व्यस्त दिखते हैं कि कविता जैसे-तैसे पढ़ते ही जाने को व्यग्र हो जाते हैं। जैसे नवरात्र में पुरोहित पाठ के लिए नहीं मिल पाते, वैसे ही हिन्दी पखवाड़े के लिए साहित्यकार मिलने कठिन हैं। एक आयोजन से दूसरे में बिना जलपान किए भाग जाते हैं। कितना खाएंगे! कईयों के हाजमे खराब हो जाते हैं। हाँ, दक्षिणा तो लेनी ही पड़ती है । जब नई-नई हिन्दी आई तो अनुवाद का सहारा लिया गया। अनुवादकों के पद भी सर्जित हुए। अनुवाद कर्ताओं ने ऐसे-ऐसे शब्द ढूंढ निकाले जो अंग्रेजी से भी कठिन रहे। उपसर्ग और प्रत्यय लगा कर ही काम चलाया गया। उपदान, मतदान, प्रतिदान, पता नहीं चलता कौन सा दान है! रेल को लोहपथगामिनी कहना, सिगरेट को धूम्र दण्डिका कहना तो एक मजाक है किंतु अनुवाद की हिन्दी में ऐसे शब्दों की भरमार है जिनका अंग्रेजी विकल्प बता पाना बहुत कठिन होता है। उस पर केन्द्र सरकार का राजभाषा आयोग, विधि आयोग, विधि तथा तकनीकी शब्दावली आयोग शब्दकोष पर शब्दकोष निकालने में जुटे रहे। उधर राज्य सरकारों ने अलग से कवायद शुरू की। फलत: एक ही शब्द के कई विकल्प सामने आए और हर जगह अपने-अपने ढंग से लिखा जाने लगा। पूरे देश में एक ही शब्द के लिए एक अर्थ नहीं बना अर्थात् कोई मानकीकरण नहीं हुआ। कहीं लोक निर्माण विभाग कहा जाने लगा, कहीं सार्वजनिक निर्माण विभाग। कहीं सरकार कहा

नस्ति। कहीं सिविल अस्पताल को असैनिक तो कहीं नागरिक लिखा जाने लगा सर्किट हाउस को कहीं विश्राम गृह तो कहीं परिधि गृह लिखा जाने लगा। यानि यह शब्दावली राज्य-दर-राज्य भिन्न रही और कहीं एक ही प्रदेश में भी अलग-अलग।

उर्दू-फारसी या अंग्रेजी के आम फहम शब्दों को लेने के परहेज से भी ऐसी क्लिष्टता आई। उर्दू-फारसी के बहुत से शब्द ऐसे प्रचलित हो चुके हैं कि उन्हें छोड़ा नहीं जा सकता। कुरता, पायजामा, दरवाजा, खिड़की, कलम, दवात, नकल, जमाबंदी ऐसे ही शब्द हैं। उधर अंग्रेजी में स्कूल, अस्पताल, इंस्पेक्टर, बोर्ड, वारंट, डिग्री आदि ऐसे शब्द हैं जो एक ठेठ देहाती भी बोलता है। अब तो गुड मॉर्निंग, मूड, बोर, किचन, बाथरूम जैसे कई शब्द हैं जो आम बोले जाते है। गांव की अनपढ़ महिला भी बोलती है: 'मेरा मूड ठीक नहीं है, मुझे बोर मत करो ।' ऐसे में जरूरत थी, सरल भाषा की जो अनुवाद की भाषा ने अंग्रेजी से भी कठिन बना दी। हिन्दीकरण का अर्थ था जनता के काम जनता की भाषा में हों। सरल से सरल, आम बोलचाल की हिन्दी का प्रयोग किया जाए। यह भी एक सच्चाई है कि हिन्दी दिवस नाम की इस तिथि से सरकारी लोगों या कुछ हिन्दी प्रेमियों के अलावा किसी को कुछ नहीं लेना देना। वे लोग नहीं जानते ऐसा भी कोई दिवस होता है। तथापि कवि पत्नी, जिसे ज्ञात है आज कवि ने चार जगह पाठ करने जाना है, सुबह ही अत्यधिक प्रसन्न मुद्रा में कहती है: ''बलमा! आज बतियाईयो हिन्दी में। कसम लगे जो अंग्रेजी का एक भी बर्ड बोले। हिन्दी का त्योहार है... आज तो बाहर ही पारटी खाओगे ।''

हमारे यहां, विभिन्न वर्गों और जातियों की तरह भाषाओं का भी यह दुर्भाग्य रहा है कि उनमें कुछ को तो संविधान की अनुसूची में शामिल किया गया, कुछ को नहीं। भाषाओं को भी अलग-अलग क्षेत्रों और जातियों की तरह लिया गया। भाषाओं का भी एक शैड्यूल बना। जो चीजें यहां शेड्यूल या अनुसूची में मिलीं, वे फायदे में भी रहीं और विवादों में भी रहीं। लेकिन, यह भी हुआ कि शेड्यूल शब्द अपना अर्थ बदल कर एक गाली के रूप में भी प्रयोग में आने लगा। यह एक वर्ग या जाति का सूचक हो गया। भाषा के मामले में आठवें शेड्यूल की भाषाएं तो सवर्ण हो गईं, जो बाहर रह गईं, वे अछूत हो गईं। किसी भी भाषा को शेड्यूल में डालना राज्य का नहीं, केन्द्र सरकार का विषय है। अत: एक राज्य की भाषा शेड्यूल में शामिल हो गई तो, तो साथ लगते दूसरे राज्य की बाहर रह गई। इस चुनाव में यह भी हुआ कि जिन्हें संरक्षण चाहिए था, उन्हें नहीं मिल पाया और पहले से ही समृद्ध थीं, वे शेड्यूल में आकर और इतराने लगीं। भाषाओं का मण्डल कमिशन बना। यानि भाषाओं में भेद पैदा हो गया। यह एक बहुत बड़ी विडम्बना है। असल में, ऐसा कोई शैड्यूल होना ही नहीं चाहिए था। होना यह चाहिए कि सभी भाषाएं फलें, फूलें। सभी को प्रोत्साहन मिले।

यह भी विचारणीय है कि इससे पहले भाषाएं अपने बलबूते पर पनपीं जिनमें मातृभाषा का हमेशा स्थान ऊंचा रहा। इसे लोकवाणी भी कहा जा सकता है। वाणी का बुनकर कबीर था जिसने मसि कागद छुआ नहीं, कलम गहि नहीं हाथ; फिर भी ऐसी वाणी बुनी जो आज तक पुरानी नहीं पड़ी। कबीर ने यदि वाणी को बुना तो तुलसी ने रामनामी चादर बना कर ओढ़ा। सूर ने जिसे कृष्ण भक्ति का रस देकर चखाया। इन कवियों ने संस्कृत को छोड़ अपनी वाणी में एक नये शिल्प का निर्माण किया। मुस्लिम कवियों ने अली अली गाते हुए भी कृष्ण मुरारी के गीत गाये। रहीमोराम के झगड़े मिटाए: 'मंदिर मस्जिद बुतखाने, कोई ये माने, कोई वो माने, हैं दोनों तेरे मस्ताने ।' कभी लैला खुदा बन गई तो कभी हीर ने कहा, 'कनें मुदरां पा के मत्थे तिलक लगा के, मैं जाणा जोगी दे नाल' या 'मैं उस जोगी किसे होर न जोगी, मैं जाणा जोगी दे नाल' जैसे गीत गाने लगी।

भाषा के जिस शिल्प को सूफी कवियों ने घड़ा, जिसे बुल्लैशाह ने गाया, जिसे लोक कवियों ने अपना माध्यम बनाया, वही असली वाणी थी जिसमें हमारी संस्कृति की जड़ें गहरे में डूबी रहीं। इसलिए अपनी बोली या अपनी भाषा का महत्व है जो समाज के पूरे क्रियाकलाप को वहन करती है। एक-एक शब्द कभी-कभी पूरी की पूरी संस्कृति को वहन करता है। इन शब्दों का पर्याय किसी दूसरी भाषा में तो क्या हिन्दी में भी नहीं मिलता। यह केवल भाषा ही नहीं है, पूरा का पूरा संस्कार है। अन्य सस्कारों की तरह हम भाषा का संस्कार भी स्वत: ही ग्रहण करते जाते हैं। भाषा के संस्कार के साथ ही हमारी संस्कृति जीवित रही है। बुल्लेशाह ने कहा न मैं हिन्दू हूँ, न मुसलमान। वे प्रेम के उपासक थे: "हाजी लोक मक्के नूं जांदे, असां जाणा तख्त हजारे; जित वल यार उसे वल काबा, भावें खोल किताबा चारे।'' हिमाचल में चम्बा के एक गीत के केवल चार शब्दों का उदाहरण देना चाहूंगा। शब्दों की मितव्ययता का ऐसा उदाहरण कहीं नहीं मिलेगा। पहाड़ी गीत के एक बोल के छह शब्द हैं: "पखला माहणू: खौदलण पाणी, डर लगंदा ।" यानि जिस मनुष्य से आपकी मुलाकात हुई है, वह पखला है, आपके लिए अजनबी है। उसकी स्थिति आपके लिए खौदले पानी जैसी है। पानी, जो निर्मल नहीं है, मटमैला है। ऐसे मटमैला पानी, जो स्वंय पत्थर फैंक कर या किसी छड़ी से मैला किया जाता है। 'खौदल पाणा' एक मुहावरा भी है। अजनबी मनुष्य और मटमैला, पानी; डर लगता है। यह दो पंक्तियां लम्बी व्याख्या मांगती हैं।

इस समय देश के संविधान की अनुसूची में बाईस भाषाएं हैं। साहित्य अकादमी द्वारा कुछ आगे बढ़ कर चौबीस भाषाओं को

मान्यता दी गई है। किंतु साहित्य अकादमी ने कुछ ऐसी भाषाओं को भी परोक्ष रूप से मान्यता दी है जो अनुसूची में शामिल नहीं हैं। इन भाषाओं में ''भाषा सम्मान'' की स्थापना की गई है जिसकी राशि पहले पचास हजार थी, अब एक लाख कर दी गई है। विश्व में छह हजार से ऊपर भाषाएं हैं तो भारत में छह सौ के लगभग भाषाएं गिनाई गई हैं। भाषा से अभिप्राय: भाषा और बोली, दोनों से हैं। भाषा विज्ञानियों के अनुसार किसी भी भाषा के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसका कोई साहित्य हो। जो भाषा अपने भाव व्यक्त करने में सक्षम है, संप्रेषणीय है, वह एक पूर्ण भाषा है, बोली नहीं। आज पूरे विश्व में बहुत सी भाषाएं लुप्त होने के कगार पर हैं। ग्लोबलाइजेशन के कारण जिंदा रहने वाली भाषाओं में चीनी, अंग्रेजी, स्पेनिश, रूसी और हिन्दी; ये पांच भाषाएं हैं। यह हर्ष की बात है कि हिन्दी भी जिंदा भाषाओं में शामिल है। यूनस्को के सर्वेक्षण के अनुसार बहुत सी भाषाएं समाप्त हो जाएंगी या समाप्ति के कगार पर हैं, इन की संख्या भारतवर्ष में अधिक है। पंजाबी भाषा, जो इतने बड़े क्षेत्र की एक समृद्ध भाषा है, भी समाप्ति के खतरे की सूची में है। कुछ भाषाएं तो समाप्त हो ही गई हैं। इन में अण्डेमान, आसाम, मेघालय, केरल तथा मध्य प्रदेश के जनजाति भाषाएं गिनाई गई हैं। इन भाषाओं के लुप्त होने के दो मुख्य कारण हैं। पहला तो यह कि इन्हें बोलने वाले ही समाप्त हो गए। सन् 2007 तक अण्डमान में एक भाषा को बोलने वालों की संख्या मात्र दस थी तो आसाम में एक भाषा के ज्ञाता पचास लोग थे। दूसरा यह कि कुछ भाषाओं को बड़ी भाषाओं, जैसे हिन्दी, अंग्रेजी ने लील लिया। अपनी मातृभाषाओं से लोग हिन्दी या अंग्रेजी की ओर चले गये। मैं अपने जमाने की बात करता हूँ ।

हमारे जमाने में, मेरे दादा संस्कृत और पहाड़ी के पण्डित थे। पिता ने पहाड़ी के साथ हिन्दी और अंग्रेजी बोली। दादा जिन शब्दों के प्रयोग जानते थे, पिता कुछ भूल गए। मैं पचास प्रतिशत भूल गया। मेरे बच्चे पहाड़ी बोल ही नहीं सकते। पहले बच्चों के नाम तुआरू, सुआरू, मंगलू रखे जाते थे। सिंह्डू (जो सीटी बजाता है), मिंह्डू (जो ऊन के गोले की तरह गठीला है), फिह्डू (जिसकी नाक चपटी है), ऐसे नाम दिए जाते। एक बार मेरा एक मित्र कुत्ते का पिल्ला लाया। यह कुत्ता डाबरमेन नस्ल का था। उसने इसका नामकरण करने के लिए मुझे कहा। मैंने बहुत खोज करके उसे 'अक्षय' और 'लक्ष्य' नाम सुझाए तो वह बहुत हंसा। उसकी हंसी वाजिब थी। उसने कहा, अरे! डाबरमेन नस्ल का कुत्ता है, यह क्या नाम रख दिया। अंग्रेजी में नाम रखो। इट शुड बी मैनली... जैसे हिन्दी जनाना भाषा है। आखिर उसने कुत्ते का नाम 'हण्टर' रखा। अब हम अपने बच्चों और कुत्तों के नाम पहाड़ी या हिन्दी में नहीं, अंग्रेजी में रखते हैं। हैरी, पीटर, जॉन, स्नूपी, फ्लॉपी रखते हैं। उनसे अंग्रेजी में बात करते हैं। कुत्ते को कहेंगे 'सीट प्रॉपर्ली या बीहेव प्रॉपर्ली!' तो बच्चे को भी कहेंगे 'सीट प्रॉपर्ली'... नो नो बाबा डोंट बी इम्पेशेंट...। एक बार किसी घर में गया तो उनका कुत्ता भौंकने लगा। मैंने चो... चो... की तो वह खाने को आया। भीतर से मालिक आए उन्होंने उसे अंग्रेजी में डांटा: नो नो...जॉन! बीहेव प्रॉपर्ली... देखो, ये ग्रेंडपा होते हैं। कुत्ता कुनमुनाने लगा। मैंने भी उसे अग्रेजी में कहा: "हेलो बेबी! हाउ क्यूट!" वह उछल कर मेरी गोद में आ बैठा और मेरा चेहरा चाट लिया। यानि हम लोग पहाड़ी से हिन्दी में नहीं आए हैं, पहाड़ी से सीधे अंग्रेजी में आए हैं। संभ्रान्त लोग मातृभाषा से हिन्दी में नहीं आए हैं, सीधे अंग्रेजी में आए हैं। यह ग्लोबलाईजेशन का असर है। ऐसे में मैं सलमान खान को बधाई देता हूं। एक बार खबर आई थी कि सलमान ने अपने कुत्ते का नाम शाहरूख रखा है। दूसरी बात, कि जिसे हम मातृभाषा कहते हैं, वह मातृभाषा नहीं है। अब बच्चों की माँएं मातृभाषा नहीं बोलतीं। शहरों में तो माँ हिन्दी भी नहीं बोलतीं। गाँव में भी अब बच्चे टाई लगा कर स्कूल जाते हैं और गुड मॉर्निंग करते हैं। घर में काम करने वाली बाई आते ही गुड मॉर्निंग करती है तो मैं शर्मा कर जबाब नहीं देता। हमारे बच्चे अब सत्तासी, अट्ठासी नहीं जानते। उन्हें ऐटीसेवन और एटी ऐट कह कर समझाना पड़ता है। अब तो दादी भी मातृभाषा नहीं बोलती। अत: अब मातृभाषा दादी-परदादी भाषा बनती जा रही है। अब यह माता की भाषा नहीं, दादी की भाषा है जिसकी घर में कोई नहीं सुनता।

-सुदर्शन वशिष्ठ
''अभिनंदन'' कृष्ण निवास, लोअर पंथाघाटी,
शिमला-171009

'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह'
गाँधी शांति प्रतिष्ठान, दिल्ली
(25 दिसम्बर 2019) के अवसर का सामूहिक चित्र

आगामी आयोजन

भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह एवं काव्योत्सव परिचर्चा : हिंगलिश और हिन्दी का भविष्य

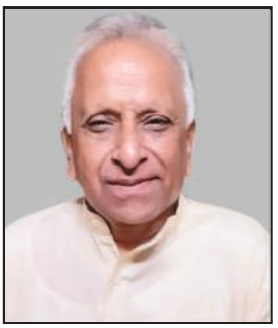

विजय कुमार शर्मा
सह सम्पादक

विगत कुछ वर्षों से विशेषत: भाषा के क्षेत्र में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी का नाम इसके उद्देश्यों, कार्यों, गतिविधियों, कर्त्तव्यनिष्ठा एवं सक्रियता के कारण एक स्तरीय तथा समर्पित संस्था के रूप मे लिया जाता है । विगत वर्षों के आयोजनों, गोष्ठियों, सभा-समारोह एवं परिचर्चाओं के माध्यम से अकादमी ने समाज में यह परिचय स्थापित किया है कि वह जमीनी स्तर पर भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्द्धन और प्रचार-प्रसार के लिए कटिबद्ध है । अकादमी ने भाषा की गंभीरता एवं संवेदनशीलता को सदैव अपनी प्राथमिकता में रखा है । इसी को ध्यान में रखते हुए विभिन्न अवसरों पर अकादमी कुछ महत्वपूर्ण एवं राष्ट्रीय मुद्दों के विषयों पर संगोष्ठियाँ तथा परिचर्चाओं का आयोजन करती है । इसी निरंतरता के साथ रविवार, 5 जनवरी 2020 को आगामी विश्व पुस्तक मेला, प्रगति मैदान में अकादमी द्वारा 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान एवं काव्योत्सव' तथा 'हिंगलिश और हिन्दी का भविष्य' विषयक परिचर्चा का आयोजन होना प्रस्तावित है । यह सत्य है कि इंटरनेट के बढ़ते प्रयोग ने विभिन्न सॉफ्टवेयर, प्रोग्राम एवं एप्लिकेशन के माध्यम से सभी उद्यम, व्यवसाय, रोजगार, सूचना, विज्ञान, कला, साहित्य, शिक्षा तथा समाज को डिजिटलाइज्ड कर कार्य करने की क्षमता को बढ़ाने के साथ-साथ इसे सुलभ और सरल बनाया है । किन्तु यह भी सत्य है कि सामाजिक मूल्य-मान्यताओं, आदर्शों, प्रतिष्ठा, नैतिकता, कर्तव्यबोध एवं अनुशासन से मनुष्य को समाज से काटने का काम भी किया है । इसका सबसे ज्यादा नकारात्मक असर भाषा पर पड़ा है । खासकर महानगरों तथा आई. टी. हब कहे जाने वाले शहरों में भाषायी प्रदूषण भी बढ़ता जा रहा है । प्राय: सभी निजी एवं सरकारी संस्थानों में तथा बहु-राष्ट्रीय कम्पनियों में रोजगार के लिए अंग्रेजी की प्राथमिकता एवं अनिवार्यता के कारण भाषा का रूप विकृत हो रहा है । बढ़ती प्रतिस्पर्धा एवं अंग्रेजी सीखने की होड़ ने समाज में एक नई विकृत भाषा को जन्म दिया है जिसे आमतौर पर हिंगलिश के नाम से जाना जाता है । विभिन्न ऐसे संस्थान जहाँ अंग्रेजी सिखायी जाती है वहाँ विद्यार्थियों की मानसिकता को इस तरह से डिजाइन किया जाता है कि अंग्रेजी में बात करना सामाजिक प्रतिष्ठा और प्रकांड विद्वान होने का सूचक है । उन्हें लगातार कहा जाता है कि बेझिझक जैसा भी आता हो और जितना आता हो अंग्रेजी में वार्तालाप करने का अभ्यास करते रहें बेशक बीच-बीच में हिन्दी शब्दों का भी सहारा लेना पड़े । आप घर में परिवार के सदस्यों के साथ या रास्ते में अपने मित्रों के साथ अंग्रेजी में ही बोलने की आदत डालें भले ही आप टूटी-फूटी अंग्रेजी बोलें । ऐसा करते रहने से अभ्यास होता रहता है । अंग्रेजी सीखने की इसी अभ्यास ने कालान्तर में युवाओं में एक नई भाषा के प्रचलन को विकसित किया । यही हिंगलिश की उत्पत्ति की जड़ है । असल में हिंगलिश कोई भाषा नहीं है बल्कि दो भाषाओं के संयोजन का एक विकृत रूप है । ना तो यह पूरी तरह हिन्दी है और ना ही पूरी तरह अंग्रेजी है । इसमें यह भी अवश्यक नहीं कि औसतन कितने शब्द हिन्दी के बोले जाएँ और कितने अंग्रेजी के । व्याकरण की दृष्टि से यह भाषायी अपांगता है । मेट्रो, रेलवे स्टेशन, एयरपोर्ट, मॉल आदि स्थानों पर आपको बहुतायत की आबादी में हिंगलिश में बात करते हुए युवा वर्ग एवं नव धनाढ्य वर्ग मिल जाएंगे जो किसी हिन्दी भाषी लोगों को यह जताने की चेष्टा करते हैं कि वह सभ्य, संपन्न एवं विद्वान है । इस परिचर्चा में विषय विशेषज्ञों, शिक्षाविदों एवं विद्वान वक्ताओं द्वारा भाषा की मौलिकता, हिंगलिश के दुष्परिणाम तथा भविष्य की हिन्दी की स्थिति आदि पर व्याख्यान दिया जाएगा । इसी तरह 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' से गुरुग्राम के भाषा शिक्षकों को सम्मानित किया जाएगा । भाषा गौरव शिक्षक सम्मान हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा भाषा शिक्षकों को दिया जाने वाला वार्षिक सम्मान है । यह सम्मान उन शिक्षकों को अर्पण किया जा रहा है जिनके विद्यार्थियों ने वर्ष 2018-19 की 10वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है । अकादमी द्वारा गुरुग्राम के विद्यालयों के लिए 'मेधावी छात्र सम्मान समारोह' का आयोजन किया गया था जहाँ 30 विद्यालयों के कुल 870 मेधावी छात्रों को सम्मानित किया गया था । सम्मानित होने वाले विद्यार्थियों में शत प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले 32 मेधावी छात्रों को 'भाषा रत्न सम्मान', 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले मेधावी छात्रों को 'भाषा दूत सम्मान' तथा सर्वाधिक प्रविष्टियाँ भेजने पर 'डी.पी. एस. जी. स्कूल, पालम विहार, गुरुग्राम' को 'भाषा प्रहरी सम्मान' से सम्मानित किया गया था । भाषा गौरव शिक्षक सम्मान, मेधावी छात्र सम्मान समारोह की दूसरी कड़ी है । इस आयोजन में शिक्षकों द्वारा काव्य पाठ भी किया जाएगा ।

पत्रिका के अब तक के अंकों में साक्षात्कार स्तम्भ में प्रकाशित वरिष्ठ साहित्यकारों, लेखकों, शिक्षाविदों आदि की सूची :

डॉ. अशोक चक्रधर

डॉ. हरीश नवल

डॉ. कमल किशोर गोयनका

प्रो. अवनीश कुमार

प्रो. नन्द किशोर पांडेय

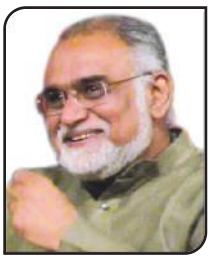
डॉ. सच्चिदानंद जोशी

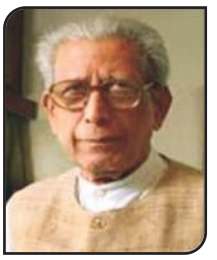
डॉ. नामवर सिंह

श्री बल्देव भाई शर्मा

सुश्री मैत्रयी पुष्पा

डॉ. प्रभा ठाकुर

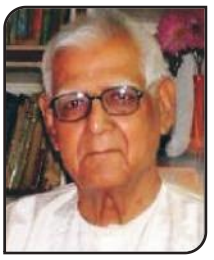
प्रो. रामदरश मिश्र

श्री महेश चंद्र शर्मा

प्रो. विनोद कुमार पाण्डेय

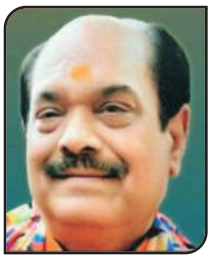
डॉ. गोविन्द व्यास

श्री गंगाप्रसाद उप्रेती

श्री योगेश पुंजा

श्री सुरेन्द्र शर्मा

डॉ. रामशरण गौड़

सुश्री आशना कन्हाई

श्रीमती चित्रा मुद्गल

श्री निशान्त जैन

डॉ. रमा शर्मा

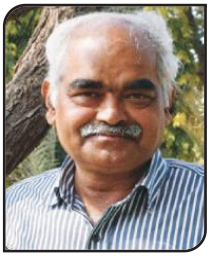
श्री दिनेश तिवारी

प्रो. गिरीश्वर मिश्र

डॉ. अनामिका

B.K. SETHI
+91-9654274072
+91-8745920612

NationsBook .in

Online Book Store

www.nationsbook.in info.nationsbook@gmail.com https://nationsbook.blogspot.com

अब आप www.nationsbook.in पर कम्प्यूटर या लैपटॉप से ऑनलाइन पुस्तकों का ऑर्डर करें और घर बैठे पुस्तकों को प्राप्त करें ।

Categories are available

* Spritual * Hindi Literature * Poems * Ghazals
* Science and Technicals * Novels * English Literature * Text Books
* Art Books * English Books * Media Books Etc.

Office : 7/253, Ground Floor, Sant Nirankari Colony, Delhi-110009

RNI No. : DELHIN/2017/73904

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित संस्था)

पंजीकृत कार्यालय : 3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034
दूरभाष : 09873556781, 09968097816
E-mail : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com
Website : www.hindustanibhashaakadami.com